वामाङ्के च विभाति भूधरसुता देवापगामस्तके, भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट् ॥

सोयं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा, शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशङ्करः पातुमाम् ॥ १ ॥

हरिःओं

अघमर्षणद्विजराज

भाषाटीका सहित

मुरादाबाद मुहल्ले कठगर निवासी

ठाकुर उमरावसिंह जीने

श्रुति स्मृति पुराणादि के प्रमाणों से सकल
धार्मिक सज्जन पुरुषों के हितार्थ रचा

उसीको

शिवलाल गणेशीलाल के

"लक्ष्मीनारायण" यन्त्रालय

मुरादाबाद में मुद्रित कराकर प्रकाशित किया।

प्रथमवार संवत् १९५९

इस पुस्तकको बिना रचयिताकी आज्ञा किसी
को छापने का अधिकार नहीं है।

श्रीगणेशाय नमः॥

अघमर्षणद्विजराजा

दो०—सर्वेश्वर कारण सकल, कृपासिंधु सुखऐन ।
शिवशङ्करगिरिजातनय, मैं प्रणवौं दिनरैन॥

सो०—वंदौं मैं दिनरैन, गिरा भवानी गुरुचरन ।
चारपदारथ दैन, अर्थ-धर्म-कामादि सब ॥

चौ०—श्रुति सुर सिन्धु तीर्थ देवमुन । प्रणवौं जे संयुक्त सकलगुन ॥ पुरवौ यह अभिलाष हमारी। ग्रन्थ होय यह द्विज हितकारी ॥ तेज वृद्धि दुख पाप निवारन । क्षत्री आदि द्विजातिन कारन॥ रच्यो ग्रन्थ यह है साधारन । धर्मपताका हित कर धारन । ग्रन्थ नाम सुनिये श्रीराजन् ॥ श्रीदा अघमर्षण शुभभाजन।श्री उमरावसिंह क्षत्रीवर ॥ श्रीशिवसिंह पुत्र शाखाकर । शहर मुरादाबाद निवासी ॥ क्षत्री द्विज तहँ हैं सहवासी । पिता महा परपिता हमारे ॥ अवधराज से यहां सिधारे । अवधाधिप पूवन्ध अज्ञावर ॥ दुष्टन मार वसायो कठगर । तबसें बसैं यहां सुखजानी ॥ निरातङ्क शिवशङ्कर मानी । है जनवार वंश नयनागर ॥ जन्म हमार सुधा सुख आगर ।

दो०—जो यह ग्रन्थहिं देखकै,धर्म करै स्वीकार ।
शङ्कर पुरवेंगे सदा, मनकामना तुम्हार ॥

इस ग्रन्थ में व्रात्यसंस्कार और गृहस्थधर्म द्विजातियों के धर्म शास्त्रानुकूल लिखेजायँगे परन्तु प्रथम उन महाशय के द्वेषी कथनपर मुझ को कुछ थोडा लिखना आवश्यक है कि जो क्षत्री वैश्यजाती को शूद्र बतलाते हैं और उनहीं के भाई बडे नामी पण्डित शूद्रों को कल्पित ग्रन्थ रचके द्विजाती बतलाते हैं बिना सोचे समझे आशय के अपनी आँख बन्दकर अपनी इच्छानुसार अल्पज्ञता से कहते हैं कि कलियुग में केवल ब्राह्मण और शूद्र दो वर्ण हैं क्षत्री वैश्य वर्ण शूद्र होगये हैं श्रीपरशुरामजी ने २१ बार पृथ्वी सब क्षत्रियों से जीत के निरक्षत्र कर नन्दादि शूद्र और ब्राह्मणों और कश्यप जीको राज दे दिया श्रीमद्भागवतके नवमस्कन्ध में लिखा है कि—जब सहस्रावाहु कामधेनु को जमदग्निजी से बलात्कार अपने घर को लेगया और परशुरामजी ने आनके सुना तो श्रीपरशुरामजी क्रोधित हो सहस्रावाहु के यहां गये घोरयुद्ध में सेनासहित सहस्रावाहु को मारके अपने यहां कामधेनु को ले आये यमदग्निजी ने यह वृत्तान्त उन से सुनके संवतभरको तीर्थयात्राको भेजा पीछे सहस्रावाहु के पुत्रों ने जो संग्राम से भागगये थे दुष्टतासे छिपके जमदग्निजी को मारडाला तब परशुरामजीने २१ बार युद्धकर पापी क्षत्रियों को मारडाला श्री देवीभागवतके स्कन्धं ६ । अध्याय १६ में लिखा है कि हयहयवंशी क्षत्री राजाओं ने अपने भार्गववंशी पुरोहितों को इतने दान दिये कि—जिसके कारण उन राजाओंकी सन्तान निर्धन होगई एकसमय में उन को कार्यवश द्रव्य की चाहना हुई तो उन्हों ने अपने पुरोहितों से द्रव्य

मांगा तो पुरोहितों ने कहदिया कि-हमारे पास नहीं है तब उन राजाओं ने यह जानके कि-द्रव्य है परन्तु हमको उधार नहीं देते हैं दुष्टता से उन भार्गववंशी पुरोहितों के वंश को हनन करके निर्मूल करना चाहा कुछ स्त्री भाज परवत में ईश्वराराधन करनेलगीं हयहयवंशी दुष्ट उनको मारने पर्वतपर गये वह स्त्रियें प्राणभयसे व्याकुल हुईं उस समय उनके पुत्रकी दृष्टि से वह हयहयवंशी अन्धे होगये पुनः उन स्त्रियोंकी प्रार्थना से अपने नेत्र पाय घर को लौटे कारण यह कि-भार्गवभगवान् श्रीपरशुरामजी ने निःसन्देह ऐसे पापी क्षत्री राजाओं को मार राज्याच्युत कर दूसरों को देदिया यह सनातनधर्म है कि-अपने शत्रुओं को सब कोई दण्ड देते हैं आतताई के वधको धर्मशास्त्र भी कहता है यथा वसिष्ठस्मृति अध्याय ३ में-

आततायिनं हत्वा नात्रप्राणच्छेत्तुः किंचित्किल्विषमाहुः षट्विधास्त्वाततायिनः ॥ अथाप्युदाहरन्ति—अग्निदोगरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः । क्षेत्रदारहरश्चैव षडेते आततायिनः ॥ १ ॥ आततायिनमायांतमपिवेदांतपारगं ॥ जिघांसंतंजिघांसीयान्नतेनब्रह्महाभवेत्॥२॥ स्वाध्यायिनं कुले जातं योहन्यादाततायिनं । नतेनभ्रूणहासस्यान्मन्युस्ते मन्युमृच्छति ॥ ३ ॥ इति ॥

अर्थ—आततायी मारनेवाले को कुछ दोष पाप नहीं होता है यह ६ छे प्रकार के आततायी हैं इसमें यह वचन हैं। अग्नि लगानेवाला विष देनेवाला शस्त्र मारनेवाला धन का चोर खेत का चोर भूमि हरनेवाला स्त्री का चोर आततायी वेद-

पाठीतक को मार ब्रह्महत्या नहीं होती आततायि का पाप क्रोध उसको मारता है अधर्मी पापी क्षत्रिओं को परशुराम-जीने लिखित वाक्यानुसार मारके उन को राज से भ्रष्ट कर-दिया देखो क्षत्री बहुत से श्रीजानकीजीके स्वयंवर में राजा-ओं का आना अनेक ग्रन्थों से पायाजाता है वाल्मीक रामा-यण में लिखा है कि श्रीमहाराज दशरथजी श्रीरामचन्द्रमहा-राजादि चारों भाइयों का विवाह किये अपने घरको आते थे रास्ते में श्रीमहाराज परशुरामजी उन को मिले प्रणाम आशी-र्वाद के उपरान्त श्रीपरशुरामजी ने श्रीजानकी स्वयंवरमैं धनुष भंजन मनमैं स्मरणकर महाराज रामचंद्रजीसे क्रोधितहोके कहा कि हे राम तुम्हारा गर्वनाशक जो हमारा धनुप है इसको तुम चढाओ महाराज दशरथजी की क्षमाप्रार्थनाको जब न माना तो श्रीरामचंद्रजी ने कठोर धनुष उनसे अपने हाथ में लेकर मृणाल की भाँत अतिलाघवता से खैंच धनुष चढादिया तब श्रीपरशुरामजी विखिन्न चित्तहो अपने अनुचित कथनकी क्षमा प्रार्थनाकर महेंद्राचल पर्वत को चलेगये और देखो महाराज जनक के यहां तो श्रीपरशुरामजी का धनुप तो धराही था जिससे प्रीति परस्पर प्रत्यक्ष निर्द्रोह विदित है श्रीजानकी स्वयंवर मैं दल बल सहित बहुत से राजा थे सेना सहित राजाओं का आना प्रतीत कारक है कि उनसे श्रीपरशुरामजी से युद्ध नहीं हुआ देखो श्रीपरशुराम जी ने अंबाके विवाह को कहा और गांगेय भीष्मजी ने जब श्रीपरशुरामजी का वचन न माना तो परशुरामजी का उनका २८ दिन घोर युद्ध हुआ जब अग्निबाणादि घोर अस्त्रशस्त्र से युद्ध में भीष्मजी का रूपतक वेधित न हुआ तो श्रीपरशुरामजी ने काल दंड मारने को उठाया तो श्रीब्रह्माजी ने कहा कि भीष्म नहीं

गरेगा कालदंड मतमारो भीष्मक्षत्री है इसके रणसे भागने मैं अपकीर्ति इसकी है आप अंतर्ध्यान होजाओ तब परशुरामजी अंतर्ध्यान होगये यह कथा भारत आदिमें लिखी है देहाभिमान से भीष्मजी क्षत्री,परशुराम जी ब्राह्मण भार्गव वंशी अवतार थे इन सब पूर्व लिखित प्रसंग से और वाल्मीकि रामायण और भारत में लिखा है कि युद्ध सेनाकी पदाघातधूल से सूर्य छिपगया आकाश मैं मृतक शरीरों के अंग वाणजाल वेष्टित भ्रमण करते थे रुधिर प्रवाहित नदी थी इसका आशय रणक्षेत्र संबंधी है सर्व देश से प्रयोजन नहीं है देखो द्वापर और महाभारत के युद्ध में कितनेक्षत्री राजाथे और उसके उपरान्त परीक्षित जन्मेजय विक्रमादित्य शालिवाहन और सूर्य चंद्रवंशी क्षत्री महाराज और उनके जातीया क्षत्रीगण अद्यापि हैं और जबतक कलियुगमें आयुं उमर)मनुष्य की १६ वर्ष की होगी नारदादि ऋषियों के कथनानुसार वर्णसंख्या रहेगी देखो नारदजी ने ऋषीगण प्रसंसे नारदीय संहिता मैं वरणधर्म कलियुग समयानुसार यह लिखा है।

ऋषिरुवाच—युगधर्माः समाख्यातास्त्वया-संक्षेपतोमुने ! ॥ कलिंविस्तरतो ब्रूहित्वं हिसर्व विदांवरः ॥ १ ॥ ब्राह्मणाःक्षत्रियावैश्याःशूद्राश्च मुनिसत्तमाः ॥ किमाहाराः किमाचारा भविष्यन्ति कलौयुगे ॥ २॥ नारदउवाच ॥ शृणुध्वमृषयः सर्वेनारदेन महात्मना ॥ सनत्कुमारमुनयेकथितंतद्वदामिवः ॥ ३ ॥ सर्वेधर्मा विनश्यन्ति कृष्णे कृष्णत्व मागते ॥ तस्मात्कलिर्महाघोरः सर्वपा-

पस्य साधकः ॥ ४ ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा धर्मपराङ्मुखाः ॥ घोरेकलियुगेप्राप्ते द्विजा-वेदपराङ्मुखाः ॥ ५ ॥ व्याजधर्मरताः सर्वे दम्भाचारपरायणाः ॥ असूयानिरताश्चैव वृथा-हंकारदूषिताः ॥ ६ ॥ सर्वसंक्षिप्यते सत्यंनरैः पण्डितगर्वितैः॥अहमेवाधिक इतिसर्वएववदन्ति वै ॥७॥अधर्मलोलुपाःसर्वेतथा वैतण्डिकानराः । अतःस्वल्पायुषःसर्वे भविष्यन्ति कलौयुगे ॥ ८ ॥ अल्पायुष्ट्वं मनुष्याणां न विद्याग्रहणंद्विजाः ॥ विद्याग्रहणशून्यत्वादधर्मो वर्द्धते पुनः ॥ ६ ॥ व्युत्क्रमेणप्रजाः सर्वाः क्षीयन्ते पापतत्पराः । ब्राह्मणाद्यास्तथावर्णाःसंकीर्यन्ते परस्परम् ॥ १० कामक्रोधपराःमूढा वृथासंताप पीडिताः ॥ बद्ध-वैराभविष्यन्ति परस्पर वधेप्सवः ॥ ११ ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः सर्वधर्म पराङ्मुखाः ॥ शूद्रतुल्या-भविष्यन्ति तपःसत्यविवर्जिताः ॥ १२ ॥ कलि-प्रथमपादेऽपि विनिन्दन्ति हरिंनराः ॥ युगान्तेत हरेर्नामनैवकश्चित्स्मरिष्यति ॥ १३ ॥ शूद्रस्त्री-सङ्गनिरता विधवासङ्गलोलुपाः ॥ शूद्रान्नभोग-निरता भविष्यन्ति कलौयुगे ॥ १४ ॥ कुहकैश्च जनैस्तत्रहेतुवादविशारदाः ॥ पाखण्डिनो भवि-

ष्यन्ति चतुराश्रमनिन्दकाः ॥ १५ ॥ नचाद्विजाति शुश्रूषां नस्वधर्मप्रवर्तनम् ॥ करिष्यन्तितदाशूद्राः प्रव्रज्यालिङ्गिनोद्विजाः ॥ १६ ॥ काषायपरिवीताश्चजाटिलाभस्मधूलिताः ॥ शूद्रधर्मान्प्रवक्ष्यन्ति कूटबुद्धिविशारदाः ॥ १७ ॥ अशौचा वक्रमतयः परपाकान्नभोजिनः ॥ भविष्यन्तिदुरात्मानः शूद्राः प्रव्रजितास्तथा ॥ १८॥ उत्काच जीविनस्तत्र महापापरतास्तथा भविष्यन्त्यथपाखंडाः कापालाभिक्षवोऽधमाः ॥१६॥ एतेचान्यत्रबहुवः पाखण्डाविप्रसत्तमाः॥ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः भविष्यन्तिकलौयुगे ॥ २० ॥ गीतवाद्यपराविप्रा वेदवादपराङ्मुखाः॥ भविष्यन्तिकलौप्राप्ते शूद्रमार्गप्रवर्तिनः ॥ २१ ॥ अल्पद्रव्या दरिद्राश्च वृथाऽहंकारदूषिताः ॥ प्रतिग्रहपरा नित्यंनरादुर्मार्गशीलिनः ॥२२॥ आत्मस्तुतिपराः सर्वेपरनिंदापरास्तथा ॥ विश्वासहीनाः पुरुषा वेददेवद्विजादिषु ॥ परमायुश्चभाविता तदा वर्षाणि षोडश ॥ २३ ॥ इति ।

इनका अर्थ सरल होने के कारण नहीं लिखा है । इन नारदजी के वचनों से भी चारों वर्ण का कलियुग में १६ वर्ष की मनुष्य आयु तक रहना पायाजाता है अब बुद्धि-

वान् पुरुष ऊपर के लिखे प्रसंगों से यथार्थ जान सकते हैं कि–क्षत्री वैश्य वर्ण कबतक रहेंगे और श्रीपरशुरामजी ने समस्त पृथ्वी के क्षत्री जाती का राजछीना था या केवल हयहय वंशी क्षत्री दुष्टाचर्णों का। सदैव युगानुकूल वर्णों के धर्म होते हैं जैसा कि–महाराज पराशरजी ने अपनी स्मृती में कहा है कि–

युगेयुगे च येधर्मास्तेपुतेपुचयेद्विजाः ।
स्तेषांनिन्दानकर्त्तव्यायुगरूपाहितेद्विजाः ॥

तैसेही भारत आरण्यपर्व में भी महाराज व्यासजीने कहा है कि-

भूमिर्नद्योनगाश्चैतेसिद्धादेवर्षयस्तथा ।
कालं समनुवर्तन्ते तथा भागायुगेयुगे ।

ऊपरके सब वृत्तान्त अति सूक्ष्म रीति से लिखे हैं विशेष देखनेकी इच्छा हो तो भारतादि लिखित ग्रंथोंमें देखलो इस ग्रंथ में जो अंक अध्याय स्मृतियों के लिखे हैं वह सब स्मृतियों में मिलैंगे अब आवश्यक लेख जो धर्मशास्त्र में लिखे हैं परन्तु उनको सर्वसाधारण मनुष्य नहीं देखसकते हैं इसकारण मैंने अपने सब द्विजाती भाइयों के कारण भाषार्थ अपनी बुद्धि के अनुसार लिखे हैं कि–सर्वसाधारण अपने प्रयोजन को जो धर्म सम्बन्धी हैं देखं धर्म में प्रवृत्त हों प्रायश्चित्तादि ब्राह्मण द्वारा समझकर करैं ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य की द्विज संज्ञा है तीनों की उत्पत्ति यह कही है कि–

गायत्र्या छन्दसा ब्राह्मणमसृजत् त्रिष्टुभा राजन्यं
जगत्यावैश्यंनकेचिच्छन्दसाशूद्रमित्यसंस्कार्योवि

ज्ञायते त्रिष्वेव निवासः स्यात्सर्वेषांसत्यमक्रोधो-
दानमहिंसाप्रजननं च । वशिष्ठस्मृतिः चतुर्थोऽध्यायः

इनका यथालिखित धर्मशास्त्र समय पर जो गर्भाधानादि उपनयन जनेऊ आदि करके सन्ध्यादि करना चाहिये जो यज्ञोपवीत न करै जो द्विजत्व का मूलकारण है तो समय व्यतीत होने पर वह महर्षि आपस्तम्ब के सूत्रानुकूल प्रायश्चित्त करैं न करने पर यथा सूत्र उसके साथ व्यवहार होना चाहिये । सूत्र यह है:-

यस्यपितृपितामहौअनुपनीतौस्यातांतेब्रह्महसंस्तुतास्तेषांगमनंभोजनंविवाहमितिवर्जयेत्तेषामिच्छतांप्रायश्चित्तम् ॥

इसका अर्थ यह है कि-जिन के बाप दादा ने यज्ञोपवीत जनेऊ नहीं विधिवत् यथा शास्त्र अपना किया है वे हत्यारे वेद की आज्ञाउल्लङ्घन करनेवाले हैं द्विजाती उनसे विवाहादि कोई सम्बन्ध न करैं जब वह लोग यज्ञोपवीत लेना चाहैं तो प्रायश्चित्त करैं फिर लिखते हैं कि-

यथाप्रथमेऽतिक्रमेऋतुमेवंसंवत्सरमथोपनयनं तत्उदकोपस्पर्शनंप्रातिपुरुषं संख्यायसंवत्सरान्-यावन्तोऽनुपनीताः स्युः सप्तभिः पावमानीभिर्यदन्तियच्चदूरकेइत्येताभिर्यजुपवित्रेण सामपवित्रेणांगिरसेनेत्यप्यवाव्याहृतिभिरेववासोऽध्याप्यः

इसका यह मुख्य अर्थ है कि-जैसे प्रथम मुख्य यज्ञोपवीत के कालोल्लंघन में ऋतु (दोमास ब्रह्मचर्य होता है तैसे अ-

धिककाल विलम्ब होने से संवत्सर ब्रह्मचर्य करना उचित है तब यज्ञोपवीत धारण करना प्रतिपुरुष संख्या से जितने पुरुष अनुपनीत (विनाजनेऊ) हों उतने संवत्सर ब्रह्मचर्य से रहकर उस संख्या से अर्थात् ब्रह्मचर्य पर्यन्त पावमानी आदि वेदमंत्र से प्रायश्चित्तार्थ स्नान करना अथवा सातों व्याहृति मंत्र से स्नान करना यज्ञोपवीत के उपरान्त वह पुरुष वेद का अधिकारी होजाता है इसके अनन्तर महर्षि आपस्तम्ब कहते हैं कि–

यस्यप्रपितामहादीनांनस्मर्यतउपनयनं ते श्मशानसंस्तुतास्तेषाङ्गमनादिकंवर्जयेत्प्रायश्चित्तमिच्छतांतेषांद्वादशवर्षाणिप्रायश्चित्तंततउदकोपस्पर्शनंनाध्यापनंततोयोऽभिवर्ततेतस्यसंस्कारोयथाप्रथमेऽतिक्रमेततऊर्द्ध्वंप्रकातिवत् ।

इसका अर्थ यह है कि जिसके परदादा और परदादा के बाप और उनके भी बाप इत्यादि का क्रम से संस्कार न हुआ हो न होनाभी सुनाजाता होय अर्थात् ऐसे कालसें छूटा हो कि कोई यह ठीक नहीं कहसकता है कि इतनी पुरुष(पीढ़ी) से संस्कारभ्रष्ट उन द्विजाती का हुआ है तब ऐसे स्थानेंण द्वादश वर्ष ब्रह्मचर्य कराना और पावमानी आदि मंत्र के द्वारा प्रायश्चित्तार्थ स्नान करानाइसके उपरान्त जनेऊ विवाहादि संस्कार करना ऐसे महाव्रात्योंको वेद नहीं पढना परन्तु उनकी संतान संस्कार युक्तको पढाना वह और उनकी संतति सब द्विजाती धर्म वेदादि की अधिकारी होगी । वृद्धव्रात्यों काभी संस्कार वेदानुकूल होसकता है व्रातस्तोम यज्ञ से यथा ताण्ड्य महा ब्राह्मण के चतुर्थ खण्ड के अध्याय १७ में यह लिखा है कि।

अथैपशमनीचामेढ्राणांस्तोमोयेज्येष्ठाःसन्तोत्रा-
त्यांप्रवसेयुस्तएतेन यजेरन् ॥

इसका अर्थ यह है कि जवान मवलेंद्री काभी संस्कार व्रा-
तस्तोम यज्ञसे होसक्ता है। जब संस्कार करने को कोई पण्डित
से प्रायश्चित्त करने को पूछे तो पण्डित उसको उसके लायक
और समय के अनुकूल प्रायश्चित्त बतलावे जैसे कि-

असमर्थस्य बालस्य पिता वा यदिवा गुरुः ॥
यमुद्दिश्य चरेद्धर्मं पापं तस्य न विद्यते ॥ ३२ ॥
अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालोवाप्यूनषोडशः ॥ प्रा-
यश्चित्तार्द्धमर्हन्तिस्त्रियोरोगिणएवच ॥ ३३ ॥
इति आङ्गिरसस्मृतिः॥ तथाच—क्षुधाव्याधितका-
यानां प्राणो येषां विपद्यते ॥ येन रक्षन्ति
वक्तारस्तेषांतत्किल्विषंभवेत्॥९॥पूर्णेऽपिकालनि-
यमेनशुद्धिर्ब्राह्मणैर्विना। अपूर्णेष्वपिकालेषुशोध-
यंतिद्विजोत्तमाः ॥ १० ॥ समाप्तमितिनोवाच्यं
त्रिषुवर्णेषुकर्हिचित्॥ विप्रसंपादनं कर्मउत्पन्नेप्रा-
णसंशये ॥ ११ ॥ संपादयंतियेविप्राः स्नानंती-
र्थफलप्रदं ॥ सम्यक्कर्तुरपापंस्याद्व्रतीचफलमाप्नु
यात् ॥ १२ ॥ इत्यापस्तंबस्मृतिः अध्यायः ३ ॥

इनका अर्थ यह है कि–जिस असमर्थ बालक के बदले
पिता वा गुरु जो प्रायश्चित्त करै उस लड़के का पाप नष्ट
होजाता है अर्थात् पिता वा गुरु द्वारा उस लड़के का प्राय-

श्चित्त होजाता है ॥ ३२ ॥ अस्सी ८० वर्ष का पुरुष और सोलह १६ वर्ष की अवस्था से कम बालक और स्त्री और रोगी ये आधे प्रायश्चित्त के योग्य हैं ॥ ३३ ॥ इति "अंगिरास्मृती" प्रायश्चित्त के करने से जिन क्षुधा और रोगवालों के प्राणों को पीड़ा हो अर्थात् मरने की शङ्का हो जो धर्म (प्रायश्चित्त आदि) के उपदेश करनेवाले उनके प्राणों की रक्षा नहीं करते अर्थात् शक्ति के अनुकूल उन्हें प्रायश्चित्त नहीं बताते तो वह पाप उन उपदेशकों को होताहै॥९॥यदि समय प्रायश्चित्तका नियम प्रायश्चित्त करता का पूरा होजाय तौ भी ब्राह्मणों के विना वचनशुद्धि नहीं होती और किसी का नियम पूरा न भी हो तो ब्राह्मण शुद्ध करदेते हैं शुद्धि वेद और धर्मशास्त्र और तपस्वी ब्राह्मणों के वचन में हैं ॥ १० ॥ क्योंकि प्राणों का संशय उत्पन्न होनेपर कर्म का संपादन (पूर्णतया) ब्राह्मणही करसकता है इससे क्षत्री वैश्य शूद्र) के विषय कभी भी कोई पुरुष किसी के कर्म को समाप्त (पूरा) होगया ऐसे न कहै ॥ ११ ॥ जो ब्राह्मण स्नान और तीर्थ के फल देनेवाला कर्म किसी अन्य की शुद्धि को किसी अन्य पुरुष से करवाते हैं वहां भलीप्रकार करनेवालों को पाप नहीं होता व्रती (जिसको प्रायश्चित्त करना था) उस के फल को वह पाता है॥१२॥ इत्यापस्तम्ब स्मृती अध्याय तीन ३। व्रात पदका यह आशयहै कि–द्विजाती विना यज्ञोपवीतसंस्कार के शूद्र तुल्य होजाता है प्रायश्चित्त करने से फिर द्विजाती हो जाता है ऊपर लिखे सूत्रों में द्वादश वर्ष तक का ब्रह्मचर्य करना लिखा है इस समय में इतना व्रत साधन कठिन है देखो व्रात्य होना गोमांसभक्षण और गौवध से बलवान् पाप नहीं है इसकारण जो द्विजाती महाप्रायश्चित्त करने योग्य

समझे जावैं उनका प्रायश्चित्त व्रातस्तोम से क्षत्री राजा महाराजा सर्वसम्मती से सब को पत्र (अखबार) में यज्ञ का हाल छपाकर असमर्थ व्रात्य द्विजातियों का संस्कार करादें तो उन द्विजातियों के धर्म करनें का दशांस पुण्य उनको मिलेगा और संसार हित और यशलाभ उनको होगा। अब द्विजाती भाइयों के व्रात्य संस्कारार्थ धर्म शास्त्र के वचनानुकूल वह प्रायश्चित्त लिखेंजाते हैं जो थोडे परिश्रम से होजावैं श्रीमहारानी पारवतीजी के शाप से ऋषि सनकादि शूद्र होगये थे उनके अनुग्रह उपरान्त गायत्री जपसे फिर द्विजत्व पाया देखो गोमांस भक्षण वा गोवध महापाप है उसका प्रायश्चित्त महर्षि पाराशर ने यह कहा है कि।

अमेध्यरेतोगोमांसंचांडालान्नमथापिवा। यद्भिुक्तंतु विप्रेणकृच्छ्रं चांद्रायणं चरेत् ॥ १ ॥ तथैव क्षत्रियो वैश्यस्तदर्धंतु समाचरेत्। शूद्रोऽप्येवयदाभुंक्तेप्राजापत्यं समाचरेत् ॥ २ ॥ इति पाराशरस्मृति अध्याय ॥ ११ ॥

अर्थ—अशुद्ध पदार्थ वीर्य गौ का मांस और चांडाल का अन्न यदि ब्राह्मण खाले तो वह कृच्छ्र चांद्रायण व्रत करने से शुद्धहोता है तैसेही यदि क्षत्री वैश्य खाले तो अर्द्ध चांद्रायण कृच्छ्र व्रतकरै जो शूद्रखाय तो प्राजापत्य व्रत करके शुद्धहोता है ॥ २ ॥ कृच्छ्र चांद्रायण व्रत न होसके तो यह करै कि।

गोमूत्रेणतु संमिश्रंयावकंचोपजायते। एतदेवहितंकृच्छ्रमित्थमंगिरसास्मृतं ॥ ३१ ॥

अर्थ—गो मूत्र से मिले जो जौ होते हैं उनको खावै यही

कृच्छ्र है यह अंगिरा ऋषि ने कहा है। यथाच पाराशरी अध्याय ११ में लिखा है।

अतिकृच्छ्रंचरुधिरेकृच्छ्रोभ्यंतरशोणिते । न-वाहमतिकृच्छ्रीस्यात्पाणिपूरान्नभोजनः ॥ ५५ ॥ त्रिरात्रमुपवासस्स्यादतिकृच्छ्रःसउच्यते। सर्वेषा-मेव पापानां संकरे समुपस्थिते ॥ ५६ ॥ दश-साहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधनंपरम् । इति पा-राशरस्मृति अध्याय ॥ ११ ॥

तैसे ही द्वादश अध्याय में कहा है कि—

कृच्छ्रंदेव्ययुतंचैव प्राणायामशतद्वयं । पुण्य-तीर्थेनार्द्रशिराःस्नानंद्वादशसंख्यया ॥ ६० ॥ द्वियोजनं तीर्थयात्रा कृच्छ्रमेकं प्रकल्पितम् । गृहस्थःकामतःकुर्याद्रेतसःस्खलनं यदि ॥ ६१ ॥ सहस्रंतु जपेद्देव्याः प्राणायामै स्त्रिभिःसह । च-तुर्विद्योपपन्नस्तुविधिवद्ब्रह्मघातके ॥ ६२ ॥ स-मुद्रसेतुगमनं प्रायश्चित्तं समादिशेत् ॥ ६३ ॥ सेतुबंधपथेभिक्षांचातुर्वर्ण्यात्समाचरेत् । वर्जे-यित्वाविकर्मस्थान्छत्रोपानहवर्जितः ॥ अहंदु-ष्कृतकर्मावैमहापातककारकः ॥ ६४ ॥ सेतुं दृष्ट्वासमुद्रस्य ब्रह्महत्यांव्यपोहति । सेतुंदृष्ट्वा विशुद्धात्मात्ववगाहेन सागरे ॥ ६८ ॥ इति

अर्थ—गो ब्राह्मण का रुधिर निकाल ने पर अतिकृच्छ्र और रुधिर न निकाले तो कृच्छ्र करै जो नौ ९ दिनतक अपनी अंजलीभर अन्न प्रतिदिन खायाजाता है वह अति कृच्छ्र होजाता है ॥ ५५ ॥ या तीन रात उपवास करे उसे अति कृच्छ्र कहते हैं यदि सबपापों का संकर होजाय तो (बहुत पाप) एक से होजायँ तो यह करै। दशहजार गायत्री का जाप परम शुद्धि करनेवाला है ॥ ५६ ॥ दशहजार गायत्री दोसौ २०० प्राणायाम और पवित्र तीर्थ में वारह १२ वार शिर भिगोकर स्नान यह एक कृच्छ्र का फलदेते हैं ॥ ६० ॥ और दो योजनतक तीर्थ की यात्रा कोभी एक कृच्छ्रमाना है यदि गृहस्थी पुरुष अपने वीर्य को गिराता है ॥ ६१ ॥ वह तीन प्राणायाम करै और एक हजार गायत्री जपै विधि से जो चारों विद्याओं से युक्त हो और ब्रह्महत्या करे तो ॥ ६२ ॥ उसे सेतुबंध रामेश्वरपर जाना प्रायश्चित्त बतावै और वह सेतुबंध के मार्गमें चारोंवर्णों से भिक्षा मांगे ॥ ६३ ॥ कुमार्गियों को छोड़ दे और छत्री जूता न रक्खे और कहै कि मैं खोटे कर्म करनेवाला महा पातकी हूँ ॥ ६४ ॥ समुद्र के सेतु को देख विशुद्ध मन होके सागर में स्नान करै ॥ ६८ ॥ इति ग्रन्थ त्रिशूलपाणी में लिखा है—

प्राजापत्यव्रताशक्तो धेनुंदद्यात्पयस्विनीम् । धेनोरभावेदातव्यं तुल्यं मूल्यं न संशयः ॥ धेनुः पञ्चभिराढ्यानां मध्यानां त्रिपुराणिका । कार्षापणैकमूल्याहि दरिद्राणां प्रकीर्त्तिता ॥ द्वात्रिंशत्पणिकागावो वत्सः पौराणिको भवेत् ॥

अर्थ—जब प्राजापत्य व्रत न करसकै तो एक गाय दूध

देती हुई जिसका बच्चा हो बच्चे सहित विद्वान् ब्राह्मणको दान करै और दानप्रतिष्ठा में दे जो गाय न मिले या सामर्थ न हो तो गाय की कीमत दान करै कोई सन्देह नहीं गाय की कीमत, ऋषियों ने यह कही है कि पांच कार्षापण धनवान और अडतालीस ४८ पैसा मामूली आदमी और बहुत कङ्गाल (चार आने) का गोदान करै अर्थात् धनवान् पांच कार्षापण (सवारुपया) और मामूली आदमी तीन पुराण (बारह आने) और कङ्गाल एक कार्षापण चार आने का गोदान और कुछ दानप्रतिष्ठा दे । अब दानकी तफसील करते हैं कि—

द्वात्रिंशत्पणिका गावो वत्सः पौराणिको भवेत् ।

अर्थ--बत्तीस पैसा (आठआना) की गाय और सोलह पैसा (चार आने) का उसका बच्चा होता है । तैसाही पाराशरस्मृति अध्याय ९ में कहा है कि—

प्रमापणे प्राणभृतां दद्यात्तत्प्रतिरूपकम् । तस्यानुरूपमूल्यं वा दद्यादित्यब्रवीन्मनुः ॥

अर्थ—गो आदि वधके प्रायश्चित्त के अनुसार गौ या गौ की कीमत गोदान में पुण्य करै मनुजी ने कहा है ॥ जहां किसी पाप के प्रायश्चित्त में चान्द्रायण व्रत कहा है वह व्रत न होसकै तो यह करै ।

यथा कथञ्चित्पिण्डानां चत्वारिंशच्छतद्वयम् । मासेनैवोपभुंजीत चान्द्रायणमथापरम् ।३२५

अध्याय ३ । याज्ञवल्क्यस्मृति ॥

अर्थ—चाहे जिसतरह एक महीना में २४० ग्रास भोजन करै तौ भी चान्द्रायण व्रत होजाता है ग्रास का प्रमाण मुरगी

के अण्डाकी बराबरका है ३० दिनका मास होता है प्रति दिन ८ ग्रास भोजन होगा। जहां अनशन व्रत का प्रायश्चित्त कहा है जो वह न होसकै तो यह करै।

अयाचितैश्चतुर्विंशपरैस्त्वनशनंस्मृतम्। कुक्कुटांडप्रमाणंस्याद्यावद्वास्याविशेन्मुखे॥११६॥

तैसे ही अन्य प्रायश्चित्त के निर्वाह में यह कहा है॥

उपवासेन चैकेन पादकृच्छ्रं प्रकीर्त्तितम्। कृच्छ्रातिकृच्छ्रःपयसा दिवसानेकविंशतिम्॥१२५॥

अर्थ बिना मांगे २४ ग्रास मुरगाके अण्डा की बराबर या जितना मुख में ग्रास जावै इस के खाने से अनशन व्रत कहा है॥११९॥ एक उपवास करने से पादकृच्छ्र व्रत होता है और २१ दिन दूध पीकर बितावै तो कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत होता है इति अत्रिस्मृति॥

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिःकुशोदकम्। एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सांतपनंस्मृतम्॥ ८॥ एतैस्तुत्र्यहमभ्यस्तं महासांतपनंस्मृतम्। पिण्याकंवामतक्रांवुसक्तूनांप्रतिवासरम्॥ ९॥ उपवासांतराभ्यासात्तुलापुरुषउच्यते। गोपुरीषाद्यवान्नंतु मासंनित्यं समाहितः॥ १०॥ व्रतं तु यावकं कुर्यात्सर्वपापापनुत्तये॥ ११॥ इति शंखस्मृति अध्याय अठारह १८।

अर्थ–गोमूत्र, गोवर, दधि, दूध, घी, कुशा को जल में डालके वह जल इन को खाना और एक दिन उपवास

करना यह सांतपन कृच्छ्र है ॥ ८ ॥ और तीन दिनतक इन को करने से महा सांतपन कहा है तिलों का खल विना जल का मट्ठा सत्तू इनको प्रतिदिन ॥ ९ ॥ बीच २ में उपवास करके अभ्यास करने को तुला पुरुष कहा है ॥ १० ॥ गोवररस और जौ को एक मास तक सावधानी से खाकर इस यावक व्रत को सब पाप के नाशार्थ करे ॥ ११ ॥ इति ॥

बालकसंख्या विचार ।

जातमात्रशिशुस्तावद्यावदष्टौसमावयः ॥ सहिगर्भसमोज्ञेयोव्यक्तिमात्रप्रदर्शितः ॥ ४ ॥ भक्ष्याभक्ष्येतथापेयेवाच्यावाच्येनृतानृते ॥ अस्मिन् बालेनदोषः स्यात्सयावन्नोपनीयते ॥ ५ ॥ इति दक्षस्मृति प्रथम अध्याय ॥

अर्थ–आठ वर्ष की उमर के बालक को पैदाहुये की समान जानै वह निर्दोष है उसका आकारमात्र है ॥ ४ ॥ भक्ष अभक्ष सत्य झूंठ में जनेऊ तक का उसै बोध नहीं है इसकारण वह निर्दोष है ॥ ५ ॥ इति ॥ तीर्थ स्नान से भी पाप नष्ट होवे हैं, यथा अत्रिस्मृति ।

फल्गुतीर्थेनरः स्नात्वादृष्ट्वादेवंगदाधरं गयाशीर्षंपदाक्रम्यमुच्यतेब्रह्महत्यया ॥ ५७ ॥ महानदीमुपस्पृश्यतर्पयेत्पितृदेवताः ॥ अक्षयान्लभतेलोकान्कुलंचैवसमुद्धरेत् ॥ ५८ ॥

अर्थ–फल्गु नदी में स्नान गदाधर जो गया में हैं उन के दर्शन गयासुर के शिर पर चरण रखकर ब्रह्महत्या से भी

मनुष्य छूटजाता है ॥ ५७ ॥ जो महानदी में स्नानकर पितर और देवताओं का तर्पण करता है वह अक्षय लोकों को प्राप्त होता है ॥ ५८ ॥ इति ॥

भूमिदान माहात्म्य।

गवांशतंसैकवृषंयत्रतिष्ठत्ययंत्रितं ॥ तत्क्षेत्रंदशगुणितंगोचर्मपरिकीर्तितं ॥ ४६ ॥ ब्रह्महत्यादिभिर्मर्त्योमनोवाक्कायकर्मभिः। एतद्गोचर्मदानेनमुच्यतेसर्वकिल्बषैः ॥ इति लघुपाराशर स्मृति अध्याय बारह १२ ॥

अर्थ—जहां दशहजार गौ और दश बैल बिनाबांधे टिकें उस क्षेत्र को गोचर्म कहते हैं ॥ ४६ ॥ इस गोचर्ममात्र भूमि के दान से मनुष्य मनवाणी देह और कर्मों से किये ब्रह्महत्या आदि पापों से छूटता है ॥ ४७ ॥ तैसे ही बृहस्पति स्मृति में लिखा है—

भगवन्केनदानेन सर्वतःसुखमेधते । यदक्षयं महार्घंच तन्मेब्रूहिमहत्तम ॥ २ ॥ एवमिंद्रेण पृष्टोऽसौदेवदेवपुरोहितः । सुवर्णरजतंवस्त्रं मणिरत्नंच वासव॥सर्वमेवभवेद्दत्तंवसुधांयःप्रयच्छति ।

अर्थ—हे भगवन् किस दान से सबजगह सुख होताहै और जिस दान का अक्षय और महान् फल है उस को हे बड़ों में बड़े मुझसे कहो ॥ २ ॥ हे इन्द्र जो मनुष्य वसुधा पृथ्वी का दान देता है उस ने सोना चांदी वस्त्र मणिरत्न ये सब दिये सोना पृथ्वी गौ के दान से सब पापों से छूटता ॥ ९॥

अथ सम्वर्तस्मृति ।

तिलधेनुंचयोदद्यात्संयतायद्विजातये । ब्रह्म-
हत्यादिभिः पापैर्मुच्यतेनात्रसंशयः ॥ २०८ ॥
माघमासेतु सम्प्राप्तेपौर्णमास्यामुपोपितः । ब्रा-
ह्मणेभ्यस्तिलान्दत्वासर्वपापैःप्रमुच्यते ।२०६॥
उपवासीनरोभूत्वापौर्णमास्यांतुकार्तिके । हिरण्यं
वस्त्रमन्नंचदत्वातरतिदुष्कृतम् ॥ २१० ॥ अय-
नेविषुवेचैवव्यतीपातेदिनक्षये । चन्द्रसूर्यग्रहेचै-
वदत्तेभवतिचाक्षयं ॥२११॥ अमावास्यां च द्वाद-
श्यांसंक्रांतौ च विशेपतः। एताःप्रशस्तास्तिथयो
भानुवारस्तथैवच ॥ २१२ ॥ तत्रस्नानंजपोहो-
मोब्राह्मणानांचभोजनम् । उपवासस्तथादानमे-
कैकंपावयेन्नरम् ॥ २१३ ॥ सप्तव्याहृतिभिःका-
र्योद्विजैर्होमोजितात्मभिः । उपपातकशुद्ध्यर्थंस-
हस्रपरिसंख्यया ॥ २१५ ॥ महापातकसंयुक्तो
लक्षमेकंसदाद्विजः । मुच्यतेसर्वपापेभ्योगायत्र्या
चैवपावितः ॥ २१६ ॥ अभ्यसेच्चतथापुण्यांगा-
यत्रींवेदमातरं। गत्वारण्येनदीतीरेसर्वपापविशुद्ध
ये ॥२१७॥ऐहिकामुष्मिकंपापंसर्वंनिरवशेषतः।
पञ्चरात्रेणगायत्रीं जपमानोव्यपोहति॥ २२० ॥
गायत्र्यास्तुपरंनास्तिशोधनंपापकर्मणाम् । महा

व्याहृतिसंयुक्तांप्रणवेनचसंजपेत् ॥ २२१ ॥ ब्रह्मचारीनिराहारःसर्वभूतहितेरतः । गायत्र्याल-क्षजप्येनसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ २२२ ॥ अहन्यह-नियोधीतेगायत्रींवैद्विजोत्तमः । मासेनमुच्यतेपा-पादुरगःकंचुकाद्यथा ॥२२४॥ पावमानीतथाकौ-त्सीपुरुषंसूक्तमेवच । जप्त्वापापैःप्रमुच्येतरूपि-त्र्यंमाधुछन्दसं ॥ २३० ॥ मंडलंब्राह्मणंरुद्रसूक्तो-क्ताश्चबृहद्यथा । वामदेव्यंवृहत्सामसर्वपापैःप्रमु-च्यते ।२३१॥ इति सम्वर्तस्मृति ॥ तथाच मनु स्मृति अध्याय ११ । यथाश्वमेधःक्रतुराट्सर्वपा-पापनोदनः। तथाघमर्षणंसूक्तंसर्वपापापनोदनम्।

अर्थ—जो जितेंद्रिय ब्राह्मण को तिल या गौ देता है वह ब्रह्महत्या आदि सब पापों से छूटता है इस में संशय नहीं।२०८ माघ महीना की पूर्णमासी को उपवास करके जो तिलदान देता है वह सब पापों से छूटता है॥२०९॥ कार्तिक की पूर्णमासी को उपवास युक्त सोना वस्त्र अन्नदान कर पापको तरता है ॥ २१० ॥ दक्षिणायन उत्तरायण तुल मेप की संक्रांत व्यतीपात योग में तिथि की हानि चन्द्र सूर्य ग्रहण में दिया दान अक्षय होता है ॥ २११॥ मावस द्वादशी संक्रांत विशेष कर यह तिथि और इतवार का दिन बहुत श्रेष्ठ है। ॥ २१२ ॥ इन में किये जपदान होम स्नान ब्राह्मणोंको भोजन उपवास एक एक भी मनुष्य को पवित्र करते हैं२१३॥ जीता है मन जिन्होने ऐसे द्विज उपपातक की शुद्धिके लिये एकहजार सातोंव्याहृतियोंसे होमकरें।२१५।महापातकी लाख

गायत्रीसे पवित्र किया द्विज सबपापों से छूटताहै ॥२१६॥ सब पापोंकीशुद्धिके लिये वेदोंकी माता पवित्र गायत्री ही को बनमें या नदीतीर पर जपै ॥ २१७॥ पांच रात्रि तक गायत्री जप करताहुआ पुरुष इस जन्म और अन्य जन्म के संपूर्ण पापों को नष्ट करता है ॥ २२० ॥ पापियों की शोधक गायत्री से परे नहीं है, महाव्याहृति और ओंकार सहित गायत्री का जप करै ॥ २२१ ॥ ब्रह्मचारी भोजन को छोड़ सबके कल्याण में तत्पर हुआ, गायत्री के लाख जप से सब पापों से छूटता है ॥ २२२ ॥ जो द्विज प्रतिदिन गायत्री जपता है वह पाप से इसप्रकार छूटता है, जैसे कांचली से सांप ॥ २२४ ॥ पवमानी कौत्सीऋचा और पुरुष सूक्त पितरों के मंत्र और मधुछांदस मंत्र इनको जपके सब पापों से छूटता है ॥ २३० ॥ मण्डल ब्राह्मण रुद्र सूक्त की ऋचा बृहत्साम-देव का बृहत्सामवेद इनके जप से भी सब पापों से छूटता है ॥ २३१ ॥ इति संवर्ते, जैसे अश्वमेधयज्ञ सब पापनाशक है तैसे अघमर्षण सूक्त सब पापनाशक है ॥ इति मनुस्मृति अध्याय ११ ॥ इस अघमर्षण सूक्त की जप विधी यह है कि- एक मास तक रात्रि में भोजन करै और प्रातःकाल स्नान नदी में करते समय प्रथम विनियोग पढके फिर जल में गोता मारके भीतर जल में एकवार मंत्र जपै इसीप्रकार तीनवार प्रात और तीनवार मध्यान्ह में फिर तीनबार सायंकाल में जपै ब्रह्मचर्य से रहे हविष्यान्न भोजन करै, भूमि पर सोवै,

अथ ग्रहण स्नान माहात्म्य ।

स्वर्धुन्यंभः समानिस्युः सर्वाण्यम्भांसिभूतले॥
कुपस्थान्यपिसोमार्कग्रहणेनात्रसंशयः ॥ १४ ॥

इति कात्यायन स्मृति प्रथम पूपाठक ॥

सूर्यचन्द्र ग्रहण में कूप पवित्र तालाब और सर्व नदी झरना आदि के जल गंगाजल की समान हैं इस में कोई संशय नहीं ॥ इति ॥ पुनः शंख स्मृति अध्याय ॥ ११ ॥

अघमर्षणंदेवव्रतंशुद्धवत्यश्चतत्समाः ॥ कूष्मांड्यः पावमान्यश्चसावित्र्यश्चतथैवच ॥ १ ॥ अभीष्टद्रुपदाचैवस्तोमोनिव्याहृतीस्तथा । भारुंडानिचसामानिगायत्रीचोशनंतथा ॥ २ ॥ पुरुषव्रतं च भापं च तथा सोमव्रतानिच ॥ अब्लिंगंवार्हस्पत्यं च वाक् सूक्तममृतं तथा ॥ ३ ॥ शरुतद्रीयमथर्वशिरस्त्रिसुपर्णमहाव्रतं ॥ गोसूक्तमश्वसूक्तं च इन्द्रसूक्तं च सामनी ॥ ४ ॥ त्रिराज्य दोहानिरथंतरंच अग्निव्रतंवामदेवव्रतंच एतानिगीतानिपुनंतिजंतून् जातिस्मरत्वंलभतेयदीच्छेत् ॥ ५ ॥ इति अध्याय ॥ ११ ॥ वेदे पवित्राण्यभिहितानिएभ्यस्सावित्रीविशिष्यतेनास्त्यघमर्षणात्परमंतरजले न सावित्र्यासमंजप्यंन व्याहृतिसमंहुतम् । इति शंखस्मृति अध्याय ॥ १२

गायत्रीजपसमयेआदौदेवताऋषिछंदःस्मरेत्ततः सप्रणवसव्याहृतिकामादावंतेचशिरसा गायत्रीमावर्तयेत्अथास्याः सवितादेवताऋषिर्विश्वामित्रो गायत्रीछंदः ॐ कारप्रणवाख्याः ॐ

भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यमितिव्याहृतयः ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्यधीमाहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॐ आपो ज्योतीरसोमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोमिति शिरः भवन्ति चात्रश्लोकाः सव्याहृतिकांसप्रणवां गायत्रीं शिरसासह । येजपन्तिसदातेषां न भयं विद्यते क्वचित् ॥१॥ शतंजप्तातु सा देवी दिनपापप्रणाशिनी । सहस्रजप्तातुतथा पातकेभ्यः समुद्धरेत्।२।दशसाहस्रजप्तातु सर्वकल्मषनाशिनी॥ सुवर्णस्तेयकृद्विप्रोब्रह्महागुरुतल्पगः ।३। सुरापश्च विशुद्ध्येतलक्षजप्यान्नसंशयः।प्राणायामत्रयंकृत्वा स्नानकालेसमाहितः ।४।अहोरात्रकृतात्पापात्त-त्क्षणादेवमुच्यते । सव्याहृतिकाःसप्रणवाः प्रा णायामास्तुषोडश ॥ ५ ॥ अपिभ्रूणहनंमासात्पु नंत्यहरहःकृता। हुतादेवीविशेषेणसर्वकामप्रदायि नी ॥ ६ ॥ सर्वपापक्षयकरीवरदाभक्तिवत्सला ॥ शांतिकामस्तुजुहुयात्सावित्रीमक्षतैः शुचिः ॥७॥ हंतुकामोऽपमृत्युं च घृतेनजुहुयात्तथा ॥ श्रीका-मस्तुतथापद्मैर्बिल्वैः कांचनकामुकः ॥८॥ ब्रह्म-वर्चसकामस्तुपयसाजुहुयात्तथा ॥ घृतप्लुतैस्तिलै-

र्वह्निंजुहुयात्सुसमाहितः ॥ ९ ॥ गायत्र्ययुतहो-
माच्च सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ पापात्मा लक्षहोमे-
न पातकेभ्यः प्रमुच्यते ॥ १० ॥ अभीष्टंलोक-
माप्नोति प्राप्नुयात्काममीप्सितम् ॥ गायत्रीवे-
दजननी गायत्रीपापनाशिनी ॥ ११ ॥ गायत्र्याः
परमंनास्ति दिविचेहचपावनम् ॥ हस्तत्राणप्रदा-
देवी पततां नरकार्णवे ॥ १२ ॥ तस्मात्तामभ्य-
सेन्नित्यं ब्राह्मणोनियतःशुचिः । गायत्रीजाप्य-
निरतं हव्यकव्येषुभोजयेत् ॥ १३ ॥ तस्मिन्न-
तिष्ठतेपापमब्बिंदुरिवपुष्करे॥ जप्येनैवतुसंसिद्ध्ये-
द्ब्राह्मणोनात्रसंशयः ॥ १४ ॥ कुर्यादन्यन्नवाकुर्या-
न्मैत्रोब्राह्मणउच्यते ॥ उपांशुःस्याच्छतगुणः सा-
हस्रोमानसःस्मृतः ॥ १५ ॥ नोच्चैर्जाप्यंवुधःकु-
र्यात्सावित्र्यास्तुविशेषतः । सावित्री जाप्यनिरतः
स्वर्गमाप्नोतिमानवः ॥ १६ ॥ गायत्रीजाप्यनि-
रतोमोक्षोऽपायंचविंदति ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन
स्नातःप्रयतमानसः ॥ १७ ॥ गायत्रीं तु जपेद्भ-
क्त्यासर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ इति शंखस्मृति
द्वादशोऽध्यायः ॥

अर्थ—अघमर्षण देवव्रत शुद्धवती ऋचाकूष्मांडी ऋचा पा-
वमान सूक्त और गायत्री ॥ १ ॥ अभीष्टपदासेगव्याहृती

सात ७ भारुण्ड सामवेद गायत्री और उशनामन्त्र ॥ २ ॥ पुरुष व्रत भाष सोमव्रत जल के मन्त्र बृहस्पति के मन्त्र वाक् सूक्त अमृत ॥ ३ ॥ शतरुद्री—अथर्वशिर-त्रिसुपर्ण-महाव्रत-गोसूक्त अश्वसूक्त-दोनों सामवेद ॥ ४ ॥ तीनों आज्यदोह-रथंतर-अग्निव्रत-वामदेव व्रत ये अघमर्षण आदि सब गाने (पढने) से जीवों को पवित्र करते हैं और जो इच्छा करै इन के जप से उसी जाति में स्मृति (प्रसिद्धि) को मनुष्य प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ इति शंखस्मृति अध्याय ११ ॥ ये सब वेद में पवित्र कहे हैं इन सब में गायत्री श्रेष्ठ है और जलके भीतरके जपों में अघमर्षणसूक्त से श्रेष्ठ दूसरा नहीं है व्याहृतियों के समान होम नहीं है ॥ इति शंखस्मृति अध्याय १२ प्रथम मन्त्र के देवता ऋषिछन्द का स्मरण कर फिर आदि में सातों व्याहृति सहित अन्तमें शिरः मन्त्र सहित गायत्री का जप करै और गायत्री का सूर्य देवता विश्वामित्र ऋषि और गायत्री छन्द है तिसका जप स्वरूप यह है—

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्यधीमहि धियोयोनःप्रचोदयात् ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवःस्वरोम् ॥

श्लोकों में भी कहा है प्रणव व्याहृती शिरः सहित गायत्री ऊपर के लिखे अनुसार जो मनुष्य सदैव जपते हैं उन को भय कभी नहीं होता ॥ १ ॥ सौ १०० बार जपी गायत्री दिनके पापको नष्ट करती है हजार बार प्रतिदिन जपी सब पापों का नाश करती है सुवर्ण का चोर ब्राह्मण ब्रह्महत्यारा गुरु की स्त्री से गमन करनेवाला ॥ २ ॥ मदिरा पीनेवाला,

ये सब एक लक्ष गायत्री के जपसे शुद्ध होते हैं स्नान के समय सावधानी से तीन प्राणायाम करके ॥ ४ ॥ रातदिन में किये पाप से उसी क्षणमें छूटता है व्याहृति और ॐकार सहित सोलह १६ प्राणायाम ॥ ५ ॥ प्रतिदिन करने से एकमास में भ्रूण (गर्भ) हत्यारेको भी पवित्र करती है और गायत्री से किया होम सब कामनाओं का देनेवाला है ॥ ६ ॥ भक्ति है प्यारी जिसको वरके देनेवाली गायत्री सब पापों को क्षय करती है जो मनुष्य शांति चाहै वह शुद्ध होकर गायत्री का होम चावलों से करे॥७॥ जो लक्ष्मी को चाहै वह कमलों और जो सोना को चाहै वह बेलों से गायत्री का होम करै॥८॥ जो ब्रह्मतेज चाहै वह गौ के दूध से और भलीप्रकार सावधानी से घी मिले तिलों के होम से दशहजार गायत्री होम से सब पापों से छूटता है और पापात्मा मनुष्य लक्ष गायत्री होम से पापों से छूटता है ॥ १० ॥ और वांछितलोक में प्राप्त होता है गायत्री वेदमाता है पापों की नाशक है ॥ ११ ॥ इसलोक और परलोक में गायत्री से परे पवित्र करनेवाला नहीं है और नरकरूप समुद्र में पड़नेवाले मनुष्यों को हाथ पकड़कर रक्षा करनेवाली गायत्री ही है ॥ १२ ॥ तिससे नियमपूर्वक शुद्धतासे ब्राह्मणादि द्विज गायत्री का अभ्यास करैं और गायत्री के जप में तत्पर ब्राह्मण को हव्य (जो अन्न देवताओं के निमित्त बनाया हो) और कव्य (जो पितरों के निमित्त हो) उसे जिमावे ॥ १३ ॥ क्योंकि उस ब्राह्मण में पाप इसप्रकार नहीं टिकते जैसे कमल के पत्ते पर जल की बूँद,जप से ही ब्राह्मण सिद्धि को प्राप्त होता है इस में संशय नहीं है ॥ १४ ॥ जो गायत्री जपता है वह चाहे और कर्म करै वा न करै इसको मैत्रेय ब्रह्मरूपी कहते हैं उ-

पांशु (मंद २) जप सौगुना और मानस (मन में) जप ह-जार गुना कहा है ॥ १५ ॥ ज्ञानवान मनुष्य ऊँचे स्वर से जप न करै और गायत्री जपे तो ऊँचे स्वर से विशेषकर न करै गायत्री के जप में तत्पर मनुष्य स्वर्ग में प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ गायत्री जप में तत्पर द्विज मोक्ष के उपाय को प्राप्त होता है तिस से सर्व यत्न करके स्नानकर मन रोकके गा-यत्री सर्वपापनाशक को जपै ॥ १७ ॥ इति शंख स्मृति अ-ध्याय ॥ १२ ॥ यहां से मनुस्मृति के अनुकूल गायत्री जप-विधान है ।

अकारञ्चाप्युकारञ्चमकारञ्चप्रजापतिः ॥ वे-दत्रयान्निरदुहद्भूर्भुवः स्वरितीतिच ॥ ७६ ॥ त्रि-भ्यएवतुवेदेभ्यः पादम्पादमदूदुहत् ॥ तदित्यृचो-स्याः सावित्र्याः परमेष्ठीप्रजापतिः ॥ ७७ ॥ ए-तदक्षरमेताञ्चजपन्व्याहृतिपूर्वकाम् ॥ संध्ययो-र्वेदविद्विप्रोवेदपुण्येनयुज्यते ॥ ७८ ॥ सहस्रकृ-त्वस्त्वभ्यस्यवहिरेतत्त्रिकंद्विजः ॥ महतोऽप्येन-सोमासात्त्वचेवाहिर्विमुच्यते ॥ ७९ ॥ एतयर्चयावि-संयुक्तः कालेचक्रिययास्वया ॥ ब्रह्मक्षत्रीयावि-ड्योनिर्गर्हणांयातिसाधुषु ॥ ८० ॥ ओंकारपूर्वि-कास्तिस्रोमहाव्याहृतयोऽव्ययाः ॥ त्रिपदाचैवसा-वित्रीविज्ञेयंब्रह्मणोमुखम् ॥ ८१ ॥ येपाकयज्ञश्च-त्वारोविधियज्ञसमन्विताः ॥ सर्वेतेजपयज्ञस्यक-लांनार्हंतिषोडशीम् ॥ ८६ ॥

अर्थ—अकार उकार मकार इन तीनों अक्षरों को और भूर्भुवः स्वः को ब्रह्मा ने तीनों वेद से निकाला ॥ ७६ ॥ तीनों वेद से ही एक २ पाद त्रिपदा गायत्री को ब्रह्मा ने निकाला है ॥ ७७ ॥ ओं भूर्भुवः स्वः और गायत्री को जो प्रतिसन्ध्या वेद जाननेवाला ब्राह्मण जपै तो संपूर्ण पुण्य से युक्त होवै ॥ ७८ ॥ बाहर जाकर तीनों व्याहृतियुक्त एक मास तक नित्य एक हजार १००० गायत्री जपै तो बडे पाप से छूटै जैसे कांचली से सर्प ॥ ७९ ॥ अपने काल समय में जो ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, यह तीनों अर्थात् गायत्री संध्या से रहित हैं वह साधू लोगों में निन्दा को पाते हैं ॥ ८० ॥ ओं भूर्भुवः स्वः और गायत्री वेद का मुख और परमात्मा के मिलने का द्वार है ॥ ८१ ॥ जो पाक यज्ञ चार बल वैश्वदेव नित्य श्राद्ध अतिथि भोजन मावस पूर्णमासी का यज्ञादि ये सब जप यज्ञ की सोलहवीं कला भी नहीं हैं ॥ ८६ ॥ इति मनुस्मृति अध्याय २ केवल ओंकार तीन व्याहृती गायत्री फिर अन्त में ओंकार इतना ही जप मनुः में कहा है।

वेद मंत्र जिनका नाम ऊपर धर्म शास्त्रानुकूल लिखा है उनमें से जो इस समय मुझे मिलैंगे उन्हें आगे लिखा जायगा और उनसे भिन्न भी पाप नाशक पवित्र वेद मंत्र लिखे जायेंगे और रुद्रसूक्त पृथक् बंबई आदि में छपे हैं और वांछित वेद मंत्र काशी आदि से मिलैंगे यह स्मृति धर्मशास्त्र आदि वचन इस ग्रन्थ में इस कारण लिखे हैं कि जब ऊपर की विधि मंत्र क्रियाओं से गौ हत्या ब्रह्म हत्या आदि सब पाप नष्ट होजाते हैं तो व्रात्य द्विजाती की शुद्धि क्या न होगी ? अर्थात् अवश्य होगी जो कठिन प्रायश्चित्त

न करसके वह ऊपर लिखी विधि क्रिया को जो उसके अनुकूल हो आपजप व्रत दानादि करे वा ब्राह्मण द्वारा करावै।

संध्याजलस्थल विचार।

यज्जले शुष्कवस्त्रेणस्थले चैवार्द्रवाससा।
जपोहोमस्तथादानं तत्सर्वंनिष्फलंभवेत् इत्यापस्तंबस्मृति।

अर्थ—सूखी धोती आदि वस्त्र पहने जल में खडे होकर संध्या जप दान होम करै तो निष्फल होता हैं वा गीले वस्त्रादि पहने स्थल में संध्या जप दान होम करै तो निष्फल होता है। श्रीदेवी भागवतऽस्कंध ग्यारह अध्याय चौवीस में नारायण नारदजी ऋषि के पूछनेपर कहते हैं कि शांति के वास्ते गौके दूध में भिगो के (जंडवृक्षकी) लकडीसे गायत्री होम करै तो रोग पीड़ादि शांति हो॥ ३ ॥ या भूतरोगादि की शांतिको पीपल वृक्ष गूलड़ पाकड नीम या दूध वाले वृक्षकी लकड़ी गीली से होम गायत्री से करै ॥४॥ उडञ्चास दिन तक होम करके यह तर्पण करै कि 'ॐ सूर्यं तरपयामिंनमः'। हाथों से सूर्य को जलदे तो शीघ्रही शांति होती है। और जल में जंघातक खडाहोकर गायत्री जप करै तो सब दोष शांत हो॥ ५ ॥ गलेतक जल में खडाहोकर गायत्री जपसे मृत्युका भयछूटजाता है सर्व शांति निमित्त जल में खडाहो के गायत्री जपना चाहिये। सोना, चांदी, तांबा या क्षीरवृक्ष या। मृत्तिका के पात्र (वरतन) में पंचगव्य धरके क्षीर वृक्ष की लकडियों से अग्नि में होमकरै लकड़ी को पंचगव्य में भिगोता हुआ अग्नि में गायत्री पढकर लकडी अग्नि में छोडताजावै पंचगव्य पात्र हाथ से छूताजावै हजार आहुती दे

फिर पंचगव्य के पात्रको पकड के एक हजार गायत्री जपकर उसपर जल छिडक दे और नारियल का बलदान देकर गायत्री के सरूपका ध्यानकर रोगी को वह शेष पंचगव्य खवादे सवजादू जो कराहो उसका नाशहोजाता है कुछ असर जादूका नहीं रहता है ॥ १० ॥ जो इस तरह करता है वह देवता भूत पिशाच ग्रह राजादि सबको अपने काबूमें करलेता है ॥ ११ ॥ जो जादूका भय हो तो उसके दूर करने को शनिबार को पीपल वृक्ष के नीचे बैठ के एक हजार गायत्री जपकरै तो वह भूतरोगादि के महाकष्ट से छूटजाता है जो गिलोय को पोरी २ से काटके गौ के दूध में मिला के गायत्री से एक हजार होमकरै तो यह मृत्युंजय मंत्र सब व्याधि दूर करता है। ज्वररोग जाय जो आम्र वृक्षके पत्ता और दूधगाय से गायत्री से होमकरै। दूध दही घी गायका गायत्रीसे होमकरै तो राजयक्ष्मा तपेदिक सिल) रोग आराम होजाता है. बचको गायकेदूध में मिला के गायत्रीसे होम करै तो दमे का रोग जाय। गौके दूध की खीरसे गायत्री होमकरै तो तपेदिक राजयक्ष्मासे आराम हो। संखाहूली (संखपुष्पी) के फूलों से गायत्री से होम करै तो कुष्ट रोग जाये और चिरचिटा (अपामार्ग) के वीज से गायत्री से होम करै तो मृगी रोग जाय। गूलडवृक्ष की लकडी से गायत्री से होम करै तो धात (प्रमेह) रोगजाय। गूलड वट (वडवृक्ष) पीपल की लकडी से गायत्री होम करै तो गाय घोडा हाथी आदि पशुओं का सर्व रोगजाय। जो घर में दीमक चींटी मुहार जादा हों तो इन के दूर करने को (जंडवृक्ष जिसै शमी वृक्ष कहते हैं उन्हें गायके घी में भिगोके १०८ बार गायत्री से होम करै सब दूर होंगी गोहत्या जिसे लगे तो वह

बारह १२ दिनतक प्रतिदिन सौ १०० प्राणायाम और तीन हजार गायत्री जप करै तो सब पाप से छूटजाता है। अपनी माता या गुरुपत्नी से प्रसङ्ग करै या चोरी करै या अभक्ष वस्तु को खाले तो दशहजार गायत्री के जपसे उस पाप से छूटताहै। जल में एकमासतक १००० हजार गायत्री जपै तो एक उपवासकी बराबर है और जो चौबीस हजार गायत्री ब्रह्मचर्य से जपे तो कृच्छ्रव्रत की समान है जो चौंसठहजार गायत्री जपै तो चांद्रायण व्रतकी समान है प्रतिदिन संध्या में तीन सौ गायत्री जपेसे सबपाप नाश होते हैं। जल में गोता लगालगाकर सौवार गायत्रीजपकर सूर्यरूप गायत्री का ध्यान करके सब पापों से छूटता है। जिस कार्य में गायत्री जप होम ऊपर लिखा है संख्या जपादि नहीं लिखीहै तो रोगादि में रोग निवृत्ति तक जप होम की अवधी जाने श्री-देवी भागवत में जप होम संख्या जहां नहीं लिखी है वहां इस ग्रन्थ में भी नहीं लिखीहै दूसरी जगह जहां गायत्री जप होम संख्या लिखी है वहां पुरश्चरण दशहजार से कम नहीं लिखा है फिर तिस का दशांस होमादि लिखा है कार्य के अनुकूल जप होम करना चाहिये और सदा होम में घी गो का हो भैंस का न हो उस में दोप है जो घी गो का न मिलै तो जप के दशांस को दुगना जपने से मंत्र त्रिसित नहीं होता है फिर होम करने की आवश्यकता नहीं और जो कभी गौ का घी मिलजावे तो सदा यह विचारले कि-आहुती शुभ ग्रह के मुख में और अग्निवास पृथ्वी पर हो तो उस दिन दशांस के दशांस का होम तर्पण मारजन ब्राह्मण भोजनादि करावै और दशांसका जब होम करै तो उसके अनुकूल संख करै वेद में विशेष सूर्य की उपासना लिखीहै और

सूर्य से ही सब जगत् का सब इन्तजाम है और सूर्यचन्द्र वंश से क्षत्री जाति की उत्पत्ति है इसकारण क्षत्रियों को अवश्य गायत्री से सूर्य की उपासना करना उचित है जब कोई अपने पिता की आज्ञा मानता है तो पिता उस की वृद्धि करता है ॥

अब कुछ सूतक की शुद्धि का हाल लिखाजाता है जिस में संध्या आदि करने का हाल वरनन करना जरूर मालूम होता है कि सूतक रोगादि में कैसे करें मन्वादि ऋषियोंने सूतक शुद्धि विशेष कही है शंख–लिखित स्मृति में लिखा है कि–

यस्मिन्राशिगतेसूर्येविपत्तःस्याद्द्विजन्मनः । तस्मिन्नहनिकर्तव्यं दानंपिंडोदकक्रिया ॥ ३३ ॥ अधिमासेतुपूर्वस्याच्छ्राद्धंसंवत्सरादपि । सएवहेयोदिष्टस्ययेनकेनतुकर्मणा ॥ ३४ ॥ मरणारभ्यमाशौचं संयोगोयस्यनाग्निभिः । आदाहात्तस्यविज्ञेयंयस्यवैतानिकोविधिः ८८ इतिलिखितस्मृति ॥

अर्थ–जिस राशि के सूर्य में द्विजाति की मृत्यु हो उसी राशि के उस दिन अर्थात् तिथी में पिंडदान जलदान तथा श्राद्ध करें ॥ ३३ ॥ जो अधिकमास आनपड़े तो उसी तिथि में पहिले भी श्राद्ध करें ॥ ३४ ॥ जो अग्निहोत्री नहो उसे सूतक मरने के दिन से और जो वेदोक्त अग्निहोत्र करता है उसे दाह के दिन से सूतक होता है ॥ ८८ ॥

अमावास्यांक्षयोयस्यप्रेतपक्षेऽथवायदि ॥ सपिंडीकरणादूर्ध्वंतस्योक्तः पार्वणोविधिः ॥ २१ ॥ इतिलिखितस्मृति ॥

अर्थ–जो अमावस को अथवा कनागतों में मरे तो उसके

निमित्त सपिंडी किये पीछे क्षयी के दिन भी पार्वण श्राद्ध करै ॥ इति शंखलिखित स्मृति ॥

अतर्पितेपुपित्रेपुवस्त्रंनिष्पीडयेच्चयः ॥ निराशाः पितरस्तस्यभवंतिस्वरमानुपैः ॥२१॥ अनासनस्थितेनापितंजलंरुद्धिरायते ॥ एवंसंतर्पिताः कामैस्तर्पिकंतर्पयन्ति च ॥ २३ ॥

अर्थ–विना तर्पण करे जो वस्त्र निचोडे तो उसके पितर देवता और जो जल की आशा करते हैं वह निराश होके चले जाते हैं इससे प्रथम संध्या तर्पण करले तो फिर धोती निचोडै २१॥ विना आसन तर्पण न करै और भूमिपर न करै पात्र में जल डालता जावै वा नदी जल में तर्पण करे तो तर्पण करने वालों की सब कामना वह पूरी करते हैं ॥ २३ ॥ इतिव्यासस्मृति अध्याय ॥ ३ ॥ पराशरस्मृति अध्याय तीन ३ में यह लिखा है कि–

जातौविप्रादशाहेन द्वादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पञ्चदताहेन शूद्रो मासेन शुद्ध्यति ॥ ४ ॥ तावत्तत्सूत्रकं गोत्रे चतुर्थे पुरुपेणतु । दायाविच्छेदमाप्नोतिपञ्चमेवात्मवंशजः ॥ ९ ॥ चतुर्थेदशरात्रंस्यात्पणनिशापुंसिपंचमे ॥ षष्ठेचेतुरहाच्छुद्धिःसप्तमेतु दिनत्रयात् ॥ १० ॥ भृग्वाग्निमरणेचैवदेशांतरमृतेतथा । वालेप्रेतेचसंन्यस्तेसद्यःशौचंविधीयते ॥ ११ ॥ देशांतरमृतःकश्चि-

त्सगोत्रः श्रयतेयदि । नत्रिरात्रमहोरात्रंसद्यःस्ना
त्वाशुचिर्भवेत् ॥१२॥ देशांतरगतोविप्रःप्रयासा-
त्कालकारितात् । देहनाशमनुप्राप्तस्तिथिर्नज्ञाय
तेयदि ॥ १३ ॥ कृष्णाष्टमीत्वमावास्याकृष्णा-
चैकादशीचया । उदकंपिंडदानं च तत्रश्राद्धं च-
कारयेत् ॥ १४ ॥ यदि गर्भोविपद्येतस्रवतेवापि
योषितः । यावन्मासस्थितोगर्भोदिनंतावत्तुसूत-
कम् । १६ । आदंताज्जन्मतःसद्यआचूडान्नै-
शिकीस्मृता । त्रिरात्रमुपनीतस्यदशरात्रमतःप-
रम् ॥ १६ ॥ ब्रह्मचारिगृहेयेषांहूयतेचहुताशनः।
सम्पर्कंचेन्नकुर्वीतिनतेषांसूतकंभवेत् ॥ २० ॥
शिल्पिनः कारुकावैद्यादासीदासाश्चनापिताः ।
राजानःश्रोत्रियाश्चैवसद्यःशौचाःप्रकीर्तिताः॥२२॥
अन्तरातुदशाहस्यपुनर्मरणाजन्मनी । तावत्स्या
दशुचिर्विप्रोयावत्पूर्वंनगच्छति ॥२६॥इति पारा-
शर स्मृति अध्याय । ३ । तथाचअत्रिस्मृति-

ब्रह्मचारियतिश्चैवमंत्रपूर्वकृततथा । यज्ञोवि-
वाहकाले च सद्यः शौचंविधीयते । ६५ । वि-
वाहोत्सवयज्ञेषुअंतरामृतसूतके ॥ पूर्वसंकल्पिता
यस्यनदोषश्चात्रिरब्रवीत् ॥ ६६ ॥ इति अत्रि-
स्मृति ॥ तथा च आपस्तंवस्मृति अध्याय ॥१०॥

विवाहोत्सवयज्ञेषुअंतरामृतसूतके ॥ सद्यः शुद्धि-र्विजानीयात्पूर्वसंकल्पितंचयत् ॥ १६ ॥ देवद्रो-रायांविवाहे च यज्ञेषुप्रततेषुच ॥ कल्पितंसिद्ध-मन्नाद्यंनाशौचंमृतसूतके ॥ १७॥ इत्यापस्तम्ब-स्मृति अध्याय १० विवाहेवितंतेयज्ञेसंस्कारेचंक्र-तेतथा ॥ रजस्वलाभवेत्कन्यासंस्कारस्तुकथंभवे-त् ॥ ६ ॥ स्नापयित्वातदाकन्यामन्यैर्वस्त्रैरलं कृताम् पुनर्मध्याहुतिंहुत्वाशेषंकर्मसमाचरेत्॥१०।
इति आपस्तम्बस्मृति सप्तमअध्याय ॥

अर्थ—जन्मसूतक में ब्राह्मण दश दिनमें क्षत्री बारह वैश्य पन्द्रह दिन में शूद्र एकमास में शुद्ध होते है ॥ ४ ॥ गोत्र में भी दशही दिनतक सूतक रहता है चौथी पीढीतक की सं-तान अर्थात् एक प्रपितामहा तक की सन्तान एक गोत्र में कहलाती है पांचवीं पीढीवालों को दशदिनका सूतक नहीं होता क्योंकि चौथी पीढी के उपरान्त वंशसंज्ञा होती है ॥ ९ ॥ चौथी पीढीवाला पुरुष दशदिन में पांचवीं पीढी वाला छै ॥ ६ ॥ दिन में छटी पीढीवाला चार दिन में सात वीं पीढी वाला तीन दिन में शुद्ध होता है ॥ १० ॥ जो परवत से गिर के तथा अग्नि में जल के मरा हो वा जिस की मृत्यु परदेश में हुई हो तो उसके सूतक में और बालक वा संन्यासी की मृत्यु होने में शीघ्र शुद्धि होती है ॥ ११ ॥ परन्तु मनुस्मृति में लिखा है कि परदेश में मरे की खबर जो दश दिन के भीतर मिलै तो ब्राह्मणादि के जितने दिन सूतकके धर्म शास्त्र में लिखे हैं उन दिनों में

से जितने दिन बाकी रहे हों उतने दिन का सूतक रहता है और जो सूतक के दिन बीत जाने पर परदेशी मरे की खबर मिले तो एक दिन में स्नान मात्र से शुद्धि होजाती है, उसके सगोत्र संध्या आदि के अधिकारी होजाते हैं। जो कोई सगोत्री देशान्तर में मरै तो तीन दिन का सूतक नहीं एकदिन रात्र में ही स्नान करके शुद्ध होजाता है ॥ १२ ॥ जो ब्राह्मणादि परदेश में मरैं और उसके मरने की तिथि न मालूम हो ॥ १३ ॥ तो कृष्णपक्षकी अष्टमी वा अमावास्या वा कृष्ण पक्षकी एकादशी को उसके निमित्त जलदान और पिंडदान श्राद्ध करै ॥ १४ ॥ जो गर्भस्राव वा गर्भपात हो तो जितने मास का गर्भ हो उतने ही दिनों का सूतक होता है ॥ १६ ॥ दांत जमने से पूर्व मरै तो शीघ्र स्नानमात्र से शुद्धि होजाती है और मुण्डन से पहिले मरै तो तीन दिन में शुद्धि होती है और यज्ञोपवीत होने के बाद मरै तो तीन दिन में शुद्धि होती है ॥ १९ ॥ जिनके घरमैं कोई पुरुष ब्रह्मचारी हो या जिनके नित्य प्रति अग्निहोत्र शास्त्रानुकूल होता हो और प्रसूता स्त्री से स्पर्शादि नहीं करता हो तो उसे सूतक नहीं होता है ॥ २० ॥ शिल्पि वृत्ति करने वाले वा कारुक (हलवाई) आदि तथा वैद्य दासी दास नाई राजा और वेद पाठी यह सब शीघ्र शुद्ध होजाते हैं ॥ २२ ॥ जो दश दिन के मध्य में किसी दूसरे पुरुष का जन्म वा मृत्यु होजाय तो ब्राह्मण उसी समयतक अशुचि रहता है जिस समय तक पाहिले पुरुषके जन्म वा मृत्यु से अशुचि रहता है ॥ २९ ॥ इति पाराशरस्मृति ॥ ब्रह्मचारी संन्यासी और जिस ने सूतक पहिले मंत्र के जपका प्रारंभ करदिया हो उसकी और यज्ञ वा विवाह के समय में उसी समय शुद्धि होजाती है ॥ ९९ ॥ विवाह उत्सव और

यज्ञ इनके बीच में जो मरण वा जन्म सूतक होजाय तो पूर्व से संकल्प किये पदार्थ के खानेका दोष नहीं यह अत्रिऋषि ने कहा है ॥ ९६ ॥ तथा आपस्तंव स्मृतिअध्याय ॥ १० ॥ विवाह उत्सव यज्ञ में जो मरण या जन्म सूतक होजाय तो उसी समय में शुद्धि जाननी क्योंकि वह अन्न पहिला संकल्प किया है ॥ १६ ॥ देव द्रोणी तीर्थ वा प्याऊ विवाह और वडे यज्ञ में पूर्व संकल्पित शुद्ध अन्नादि के खाने में मरण सूतक में अशुचि दोष नहीं है ॥ १७ ॥ इति ॥ विवाह में यज्ञ होमादि होरहा हो और कुछ संस्कार भी होचुका हो बीचमें जो कन्या रजस्वला होजाय तो बाकी संस्कार कैसे हो ॥ ९ ॥ उस समय उस कन्या को स्नान कराके और दूसरे वस्त्रों से शोभायमानकर और फिर पवित्र आहुती देकर बाकी कर्म को करै ॥ १० ॥ इति ॥

यावदस्थिमनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति ॥ तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥ ७ ॥ गयाशिरेतु यत्किंचिन्नाम्ना पिंडन्तु निर्वपेत् ॥ नरकस्थोदिवं याति स्वर्गस्थो मोक्षमाप्नुयात् ॥ १२ ॥ अथ प्रेतशुद्धिः-यस्यैतानि न कुर्वीत एकोद्दिष्टानि षोडश ॥ पिशाचत्वं स्थिरं तस्य दत्तैः श्राद्धशतैरपि ॥ १६ ॥ सपिण्डीकरणादूर्ध्वं प्रतिसंवत्सरं द्विजः । माता पित्रोः पृथक्कुर्यादेकोद्दिष्टंमृतेऽहनि ॥ १७ ॥ एकोद्दिष्टंपरित्यज्यपार्वणंकुरुते द्विजः । अकृतंतद्विजानीयात्समातापितृघातकः

॥ २० ॥ अमावास्यांक्षयोयस्य पितृपक्षेऽथवा-यदि।सपिंडीकरणादूर्ध्वंतस्योक्तः पार्वणोविधिः२१ अध्वगामीभवेदश्वः पुनर्भोक्ताचवायसः।कर्मकृज्जायते दासः स्त्रीगमने च शूकरः ॥ ५९ ॥ दशः कृत्वः पिवेदापः सावित्र्याचाभिमन्त्रिताः। ततः संध्यामुपासीत शुध्येततदनन्तरम् ॥६०॥ शावसूतक उत्पन्ने सूतकं तु यदाभवेत् ॥ शावेन शुध्यते सूतिर्नसूतिः शावशोधिनी ॥ ८६ ॥ इति लिखितस्मृतिः ॥

अर्थ–जब जितने दिन मनुष्य का हाड गंगा में रहता है उतने हजारवर्ष वह स्वर्ग में रहता है ॥७॥ गयामें जिस किसी के नाम से पिंडदान करै वह यदि नरक में हो तो स्वर्ग में जाता है और स्वर्ग में हो तो मुक्त होजाताहै॥१२॥जिसके यह सोलह एकोदिष्ट नहीं कियेजाते उसको सैकडों श्राद्ध देने से भी प्रेतत्व स्थिर बनारहता है ॥ १६ ॥ सपिंडी किये पीछे प्रतिवर्ष माता पिताके मरने के दिन में पृथक् २ एकोदिष्ट करै ॥ १७ ॥ जो एकोदिष्ट को त्यागके पार्वण श्राद्ध को करता है वह उस श्राद्ध को नहीं किया जानै और वह माता-पिता का मारनेवाला है ॥ २० ॥ और जो मावस को वा कनागतों में मरै तो उसके निमित्त सपिंडी किये पीछे क्षयी के दिन भी पार्वणही करै ॥ २१ ॥ श्राद्ध में खाकर जो मार्ग चलै वह घोडा, जो पुनः भोजन उस दिनरात में करै तो काक, जो कर्म करै तो शूद्र, जो स्त्री का संग करै तो शूकर होता है ॥ ५९ ॥ पूर्वोक्त पुरुष गायत्री से दश वार जल पढके

पीवे फिर सन्ध्या करके शुद्ध होता है ॥ ६० ॥ जो मरण सूतक में जन्मसूतक होजाय तो मरणसूतकके बाकी रहे दिन समाप्त होने से ही जन्मसूतक की शुद्धि होती है और जन्म सूतक के दिन समाप्त होने से मरणसूतक की निवृत्ति नहीं होती है ॥ ८६ ॥ इति लिखितस्मृति ॥

ऋतौ श्राद्धे नियुक्तोवा अनश्नन्पतति द्विजः । मृगयोपार्जितंमांसमभ्यर्च्य पितृदेवताः ॥ ५६ ॥

यज्ञश्राद्ध इन में नौताहुआ द्विज न खावै तो वह पतित होता है शिकार करके लाया मांस देवताओं को पूजकर खावै ॥ ॥ ५६ ॥ इतिव्यासस्मृति अध्याय तीन ॥ ३ ॥

विवाह में जिस दिन मंडप छाकर नांदीमुख श्राद्ध करले तो जबतक चतुर्थी कर्म न होजावै तबतक दूलह और दुलहिन के तीन पुरुष तक के आदमी तर्पण श्राद्ध न करैं क्योंकि-दोष है सूतक और रोग में संध्या मानसी करै स्मृति सार में यह लिखा है कि ॥

संध्यास्नानपरित्यागात् सप्तहा शूद्रतां व्रजेत् । तस्मात् स्नानं च संध्यां च सूतकेऽपिसमाचरेत् ॥ अशक्तौ सूतके चैव संध्यां कुर्य्याच्च मानसीम् । मनसैव चरेत्संध्यां प्राणायामविवर्जिताम् ॥

अर्थ-सूतक में स्नान करके मानसी संध्याकरै और रोगी विनास्नान मानसी संध्याकरै प्राणायाम न करै क्योंकि सात दिनतक संध्या न करने से शूद्रता को प्राप्त होवै है दोनो श्लोकोंका अर्थ इकट्ठा लिखदिया मन्वादि ने भी ऐसे ही

कहां है ॥ अत्रिस्मृति में यह लिखा है कि विवाहादि में स्त्री पति के दहने रहै।

श्राद्धे यज्ञे विवाहे च पत्नी दक्षिणतः सदा। सोमःशौचं ददौतासांगंधर्वश्च तथांगिराः॥१३७ पावकः सर्वमेध्यत्वंमेध्यत्वं योपितांसदा। जन्मनाब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते॥१३८॥ इति अत्रिस्मृतिः॥ तथा च अन्यत्र॥ वामे सिंदूर दानं च वामे चैव द्विरागमः। वामा वामे च शय्यायामशय्यायां च दक्षिणे ॥ १ ॥ सीमंते च विवाहे च चतुर्थीसह भोजने। व्रतेदानेमखे श्राद्धे पत्नीतिष्ठति दक्षिणे ॥ २ ॥

अर्थ-श्राद्ध यज्ञ विवाहमें सदापत्नी दक्षिणकी ओर बैठती है चन्द्रमा गंधर्व और अंगिरा बृहस्पति) ने उन स्त्रियों को शौच (शुद्धता) दी है ॥ १३७ ॥ और अग्नि ने सब अंगोंकू पवित्रतादी है इसी से स्त्रियोंको सदा पवित्रता है जन्म से ब्राह्मण संज्ञाहोती है॥१३८॥इति अत्रिस्मृति ॥ विवाह में सिंदूर जब कन्या के दूलह वा ब्राह्मण लगावैं तो कन्या दूलह के बायें तरफ बैठ के सिंदूर लगवावैं उस के उपरान्त फिर कन्या दूहल के दाहने बैठे। और दुरागमन (गौने) में वह दुलहन व्याही दूलह के बायें बैठे वामा जो स्त्री है वह अपने पति की सेजपर उसके साथ उसके वामभाग शय्यापर सोवै इसके सिवाय सब देव पितृ कार्य में पतिके दक्षिण भागमें स्थित रहती है ॥ १ ॥ सीमंत कर्म विवाह में चतुर्थी

में और उसके भोजन में व्रतदान यज्ञ और श्राद्ध में स्त्री पतिके दक्षिण भागमें स्थित रहती है।

स्नान विधिपाराशर स्मृतिअध्यायबारह

स्नानानिपंच पुण्यानि कीर्तितानि मनीषिभिः। आग्नेयं वारुणं ब्राह्मं वायव्यं दिव्यमेव च ॥ ९ ॥ आग्नेयं भस्मनास्नानमवगाह्यतु वारुणम्।आपोहिष्ठेति च ब्राह्मं पायव्यं गोरजः स्मृतं ॥ १० ॥ यत्तुसातपवर्षेण स्नानं तद्दिव्य-मुच्यते। तत्रस्नात्वातु गंगायांस्नातो भवति मानवः ॥ ११ ॥ इति ॥

अर्थ–बुद्धिमानों ने पांच स्नान विधि पवित्र कही हैं॥ १॥ आग्नेय, वारुण, ब्राह्म, वायव्य, दिव्य, ॥ ९ ॥ भस्म के स्नानको आग्नेय, जलके को वारुण, आपोहिष्ठा इन तीन ऋचाके को ब्राह्म, गौओं की रजके स्नान को वायव्य कहते हैं ॥ १० ॥ और वर्षाके समय धूपभी निकल रही हो उस समय मेघ की बूंदों से जो स्नान कियाजाता है उसे दिव्य स्नान कहते हैं क्योंकि उस समय स्नान करके मनुष्य को गंगा के स्नान का फलहोता है ॥ ११ ॥ इति।

अथ स्त्री धर्म।

जीवद्भर्तुश्र्चयानारी उपोष्यव्रतचारिणी। आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारी नरकंव्रजेत् ॥ १३४ ॥ तीर्थस्नानार्थिनीनारी पतिपादोदकं पिबेत्। शंकरस्यापिविष्णोर्वाप्रयाति परमं पदम् ॥१३५॥

इति अत्रिस्मृतिः।

अर्थ—जो स्त्री पति के जीते व्रत उपवास करती है वह आप नरक में जाती है और अपने पति की उमर कमकरती है ॥ १३४ ॥ जो स्त्री को तीर्थ स्नान की इच्छा होय तो अपने पति के चरणोंको धोकर पीवै तो शिव वा विष्णुके पद अर्थात् कैलाश वा वैकुण्ठको प्राप्त होती है ॥१३५॥ इति

रजस्वला विचार ।

रजस्वलायाःसंस्पर्शः कथंचिज्जायतेशुना ॥
रजोदिनानांयच्छेषंतदुपोष्यविशुद्धयति ॥ १५ ॥
अशक्ताचोपवासेन स्नानंपश्चात्समाचरेत्॥तत्रा-
प्यशक्ताचैकेनपंचगव्येनशुद्धयति ॥ १६ ॥ इति
आपस्तम्बस्मृतिसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अर्थ जो रजस्वला स्त्री को कुत्ता छूले तो रजके जो बाकी दिन रहैं उन में उपवास करने से भलीप्रकार शुद्ध होती है ॥ १५ ॥ जो सामर्थ्य नहोय तो एक उपवास करके स्नान करले जो स्नान में भी असमर्थ हो तो एक उपवास और पञ्चगव्य पीने से शुद्धि होती है ॥ १६ ॥ इति ॥ रजस्वला विषै धर्मशास्त्र में बहुत लिखा है केवल दो श्लोक में लिखके अब थोडा हाल लिखताहूं कि रजस्वला चारदिन तक किसी को न छूवै कोई वस्तु भोजन की भी न छूवै कुरूप स्त्री पुरुष बालक को न देखे अपने मन में कोई दुःख और क्रोध न करै अग्नि तारागण को न देखै और पर्वदिन और मघादि नक्षत्रों में स्त्री अपने पुरुष से सङ्गम न करै और जिस दिन स्त्री गमन करै तो उस पुरुषको उचित है कि वह गायत्री जप विशेष करके ईश्वर से उत्तम संतान की प्रार्थना करै तो ईश्वर उसको शुभ संतान देंगे व्यासस्मृती में रजस्व-

लाधर्म जो लिखा है उसको अवश्य देखना उचित है जो स्त्री स्नान करके सूर्य नारायण का दर्शन करके शुद्ध हो पति के संग करैगी तो उत्तम संतान होगी ॥

स्त्रीगमन निषेध ।

मूल मघा रेवती श्लेषा इत्यादि निषिद्धकाल में स्त्रीगमन न करै।

गच्छेद्युग्मासु रात्रीषु पौष्णापित्रर्क्षराक्षसान् प्रच्छादितादित्यपथे पुमान् गच्छेत्स्वयोषितः ॥ ४३ ॥ इतिव्यासस्मृति द्वितीयोऽध्यायः ॥ षष्ठ्यष्टमीममावस्यामुभेपक्षेचतुर्दशीम् ॥ मैथुनंनैव सेवेत द्वादशींचममप्रियाम् ॥ इति वाराहपुराणम् ॥ चतुर्दश्यष्टमीचैव अमावास्या च पूर्णिमा । पर्वाण्येतानि राजेन्द्ररविसंक्रांतिरेव च ॥ इति विष्णुपुराणे ॥ दिवातुमैथुनंगत्वानग्नःस्नात्वा तथाम्भसि ॥ नग्नांपरस्त्रियंदृष्ट्वादिनमेकंव्रतीभवेत् ।५४। इतिशंखस्मृतिः ॥

अर्थ—युग्म(सम)रात्रियोंमें भी रेवती मघा अश्लेषा इन नक्षत्रों को छोड़कर स्त्रीसंग न करै अर्थात् इनमें स्त्रीगमन न करै, अपनी स्त्रीके संग ऐसे स्थानमें गमन न करे जहां दिनमें सूर्य की किरण आतीहो ४ ३ छट आठैं मावस दोनोंपक्षकी चौदस द्वादशीमें मैथुन न करै । इति वाराहपुराणम् ॥ चौदस अष्टमी मावस पूर्णमासी इतवार दिनको संक्रांत को मैथुन न करै यह पर्व के दिन हैं । इति विष्णुपुराणम् ॥ दिन में मैथुन करके और जल में नग्न होकर स्नान करके और अन्य स्त्री को नंगी देखकर एक

दिन व्रत करके शुद्ध होता है॥ १४ ॥ और सदा एक पहर रात बाकी जब रहै तो वह देवकाल होता है फिर स्त्रीगमन न करै जो उस समय गमन करैगा तो उस की सन्तान अल्पायु रोगी मूर्ख कुकर्मी दरिद्री पापी पैदा होगी यह शास्त्र में लिखा है। अब वेदमन्त्र प्रायश्चित्तादि के इसमें जो मुझे मिले हैं लिखेजाते हैं बाकी विद्वानों से काशी आदि में मिलेंगे पुरुषसूक्त रुद्रसूक्त षडंग में हैं थोड़े मन्त्र लिखता हूँ जिनका धर्मशास्त्र और ऋग्विधान में बड़ा उत्तम प्रभाव लिखा है इन के आगे सन्ध्या में भूतशुद्धि और गायत्री शापमोचनादि लिखेजाते हैं॥

द्रुपदादिवेतिमन्त्रस्य कोकिलोराजपुत्रऋषिरनुष्टुप्छन्दः आपोदेवतासौत्रामण्यवभृथे जपे नियोगः॥ मंत्रः॥ ओं द्रुपदादिवमुमुचानः स्विन्नःस्नातो मलादिवपूतं पवित्रेणे वाज्यमापःशुन्धंतु मैनसः॥ अघमर्षण सूक्तस्याघमर्षणऋषिरनुष्टुप्छंदोभाववृत्तो देवता अश्वमेधावभृथे विनियोगः। ओं ऋतंच सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ततोरात्र्यजायत ततःसमुद्रोअर्णवः समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्यमिषतोवशी सूर्याचन्द्रमसौधाता यथापूर्वमकल्पयत् दिवंच पृथिवींचांतरिक्षमथो स्वः॥ १॥ अन्नात्परिश्रुत इति मंत्रस्य प्रजापति सरस्वत्यौ ऋषी अनुष्टुप्छंदःपरमात्मा देव-

तानिजशरीरशुद्ध्यर्थे जपे विनियोगः । ओं अन्नात्परि श्रुतोरसं ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रंपयः सोमंप्रजापतिःऋतेनसत्यमिंद्रियंविपान ँ शुक्रमंधस इन्द्रस्येंद्रियमिदंपयोमृतंमधु ॥ १ ॥

ऋग्विधान से ऋग्वेदसूक्त सर्वपापनाशक लिखेजाते हैं । ऋग्वेदअष्टक ॥ ७ ॥ अध्याय ५ वर्ग २५ ।

नानानमितिसूक्तस्य आंगिरस शिशुर्ऋषिः पञ्चपदापंक्तिश्छन्दः पवमानः सोमो देवता सर्वपापक्षयार्थेजपेविनियोगः । मन्त्रः—ॐ नानानंवाउन्नोधियो विव्रतानि जनानाम् । तक्षारिष्टंरुतंभिषग्ब्रह्मासुन्वन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दो परिस्रव ॥ १ ॥ जरतीभिरोषधीभिः पर्णेभिः शकुनानाम् कार्मारोअश्मभिर्द्युभिर्हिरण्यवन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दोपरिस्रव ॥ २ ॥ कारुरहंततोभिषगुपलप्रक्षिणीनना । नानाधियोवसूयवोनुगा इवतस्थिमेन्द्रायेन्दोपरिस्रव ॥ ३ ॥ अश्वोढासुखं रथंहसनामुपमन्त्रिणः ॥ शेपोरोमण्वन्तौ भेदौ वारिन्मण्डूकइच्छतीन्द्रायेन्दोपरिस्रव ॥४॥ इति ॥ ऋग्विधानश्लोक—सहस्रवेदसदृशं संज्ञानन्तु सकृज्जपेत् । नासाध्यन्तेन लोकेषु शतवारं दिने दिने ॥ १ ॥ऋग्वेदअष्टक८॥ अध्याय८

वर्ग ४९ संज्ञानमितिसूक्तस्यसंवननंऋषिस्त्रिष्टुप्छ-
न्दःपरमात्मादेवता सहस्रवेदपारायणपुण्यफल
प्राप्त्यर्थेजपे विनियोगः॥ॐ संसमिद्युवसेवृषन्नग्ने
विश्वान्यर्यआइकस्यदेसमिध्यसेसनोवसून्याभर
॥ १ ॥ संगच्छध्वंसंवदध्वंसंवोमनांसिजानता-
म् ॥ देवाभागयथापूर्वेसंजानानाउपासते॥ २ ॥
समानोमन्त्रः समितिः समानीसमानंमनः स-
हचित्तमेषाम् ॥ समानंमन्त्रमभिमन्त्रयेवः स-
मानेनवोहविषाजुहोमि ॥ ३ ॥ समानीवआकू-
तिः समानाहृदयानिवः ॥ समानमस्तुवोमनो-
यथावःसुसहासति ॥ ४ ॥ इति ॥ श्लोकऋ-
ग्विधानम्॥अग्निमीडेजपेत्सूक्तंपापघ्नंश्रीकरंचयत्।
पारायणफलं तस्यवेदानांचैवसर्वशः ॥१॥ ऋ-
ग्वेदाष्टक । १ । अध्याय । १ । वर्ग । १ । अग्नि-
मीडेतिसूक्तस्यमधुच्छंदावैश्वामित्रऋषि गायत्री
छन्दोग्निर्देवताज्ञानाज्ञानकृतसर्वपापक्षयार्थेसर्व-
वेदपारायणपुण्यफलप्राप्त्यर्थेच जपेविनियोगः६
ॐअग्निमीळेपुरोहितंयज्ञस्यदेवमृत्विजम् ॥होता-
रं रत्नधातमम् ॥ १ ॥ अग्निःपूर्वेभिर्ऋषिभिरी-
ड्योनूतनैरुत ॥ सदेवाएहवक्षति ॥ २ ॥ अग्नि-
नारयिमश्नवत्पोषमेवदिवेदिवे ॥ यशसंवीरवत्तमम्

॥ ३ ॥ आग्नेयंयज्ञमध्वरंविश्वतः परिभूरासि ॥ स-
इद्देवेषुगच्छति ॥ ४ ॥ अग्निर्होताकविक्रतुःस-
त्याश्चित्रश्रवस्तमः ॥ देवोदेवेभिरागमत् ॥ ५ ॥
॥ ५ ॥ यदङ्गदाशुपेत्वमग्नेभद्रं करिष्यासि । तवे-
त्तत्सत्यमङ्गिरः ॥ ६ ॥ उपत्वाग्ने दिवेदिवे दोपाव-
स्तर्धियावयम् । नमोभरन्त एमासि ॥७॥ राजन्त
मध्वराणां गोपा मृतस्यदी दिवम् । वर्धमान ं स्वेद
मे ॥ ८ ॥ सनःपितेवसूनवेऽग्ने सूपाय नोभव ।
सचस्वानःस्वस्तये ॥ ६ ॥ इति । श्लोक । त्वं-
सुमेषजपेन्मंत्रं दशवारं शिवालये । अष्टम्यां वा
चर्तुदश्यां दिवाभुंक्ते नपातकम् ॥ १ ॥ ऋग्वे-
दअष्टक ॥ १ ॥ अध्याय ॥ ४ ॥ वर्ग ॥ १२ ॥
त्वंसुमेषेति मंत्रस्य सव्यऋषिस्त्रिष्टुप्छंदः इन्द्रो
देवता अष्टमी चर्तुदशी दिवसान्नभोजनभुक्त प्रा-
यश्चित्त्यर्थेजपे विनियोगः । ॐ त्वंसुमेषं महया
स्वर्विदंशतंयस्य सुभ्वःसाकमीरते ॥ अत्यंनवाजं
हवनस्यदंरथेन मेन्द्रंववृत्यामवसे सुवृक्तिभिः ॥१॥
इति ॥ श्लोक ॥ सपर्वतोजपेन्मंत्रःसक्रांतोदेश
चेजले । पर्वद्वयेभानुवारेनरोभुंक्तेनकल्मषम् ॥ १ ॥
ऋग्विदाष्टक ॥ १ ॥ अध्याय ॥ ४ ॥ वर्ग ॥ १२ ॥
सपर्वतोति मंत्रस्य सव्यऋषिस्त्रिष्टुभ्छंदः

इन्द्रोदेवतासंक्रांतावादित्यवारे रात्रिभोजनप्रा यश्चित्त्यर्थे जपेविनियोगः ॥ मन्त्रः—ॐसपर्वतो नधरुणेष्वच्युतः सहस्रमूर्त्तिस्तविपीपुवावृधे ॥ इन्द्रोयदूवृत्रमवधीन्नदीवृतमुब्जन्नर्णांसिजहृपा-णोअन्धसा ॥ १ ॥ श्लोक—सहिद्वरोजपेन्मन्त्रं शतंचेद्विष्णुमन्दिरे ॥ एकादश्यामहोरात्रंभुंक्तेय-दिनकल्मषम् ॥ १ ॥ ऋग्वेदाष्टक ॥ १ ॥ अ-ध्याय ४ वर्ग १२ सहिद्वरेतिमन्त्रस्य सव्य-ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः इन्द्रोदेवताएकादश्यामन्नभो-जनप्रायश्चित्त्यर्थंजपेविनियोगः ॥ मन्त्रः ॐस-हिद्वरोद्वरिपुवव्रऊधनिचन्द्रबुध्नोमदवृद्धोमनीषि-भिः इन्द्रंतमह्वस्वपस्यया धियामंहिष्ठरातिंसहिप-प्रिरन्धसः इति

अब वेदमन्त्र लिखता हूँ ।

ऋग्वेद अष्टक ७ अध्याय २ वर्ग १७ सूक्त ६७

अस्य श्रीपवमानसूक्तस्य यदन्तीत्यादिसप्त-चस्यमध्यआद्यायायदन्तीतिऋचोमैत्रावरुणिर्व-सिष्ठऋषिः शिष्टानामाङ्गिरसोवसिष्ठऋषिराद्यानां षण्णांगायत्रीच्छन्दःसप्तमायाअनुष्टुप्छन्दःआद्य-योःपवमानसोमोदेवताशिष्टानांपवमानाग्निर्देव-ता सर्वपापप्रशमनार्थे पाठे(वाजपे)विनियोगः॥

ॐ यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह ॥ पवमान वितज्जहि ॥ १ ॥ पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः ॥ यः पोता स पुनातु नः ॥ २ ॥ यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा ॥ ब्रह्म तेन पुनीहि नः ॥ यत्ते पवित्रमर्चिमदग्ने तेन पुनीहि नः । ब्रह्मसवै पुनीहि नः ॥ ४ ॥ उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च ॥ मां पुनीहि विश्वतः ॥ ५ ॥ त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वर्षिष्ठैः सोम धामभिः ॥ अग्ने दक्षैः पुनीहि नः ॥ ६ ॥ पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया ॥ विश्वे देवाः पुनीत मा जातवेदः पुनीहि मा ॥ ७ ॥ इति ॥ अस्य श्रीपुरुषसूक्तस्य षोडशर्चस्य नारायणपुरुषऋषिराद्यानाम्पञ्चदशानामनुष्टुप्छन्दः यज्ञेनेत्यस्यास्त्रिष्टुप्छन्दः जगद्बीजपुरुषो देवता विष्णुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ सूक्तम्—ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ स भूमिꣳ सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ १ ॥ पुरुष एवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ २ ॥ एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ॥

ततोविष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥ ४ ॥
ततोविराडजायतविराजोऽअधिपूरुषः॥ सजा-
तोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः।५तस्माद्य-
ज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् ॥ पशूँस्ताँश्च-
क्रेव्वायव्यानारण्याग्ग्राम्याश्चये ॥ ६ ॥ त-
स्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः सामानिजज्ञिरे॥ छन्दाᳬ-
सिजज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ ७ ॥
तस्मादश्वाऽअजायन्तयेकेचोभयादतः॥गावोहज-
ज्ञिरेतस्मात्तस्माज्जाताऽअजावयः ॥ ८ ॥ तं-
यज्ञंवर्हिषिप्प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः।तेनदेवा-
ऽअयजन्तसाद्ध्याऋषयश्चये ॥ ९ ॥ यत्पुरुषंव्य-
दधुःकतिधाव्व्यकल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासी-
त्किम्बाहूकिमूरूपादाऽउच्येते ॥१०॥ ब्राह्मणोऽ-
स्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः ।ऊरूतदस्ययद्-
वैश्यः पद्भ्याᳬशूद्रोऽअजायत ॥ ११ ॥ चन्द्रमा-
मनसोजातश्चक्षोः सूर्य्योऽअजायत ॥ श्रोत्रा-
द्वायुश्चप्राणश्चमुखादग्निरजायत ॥ १२ ॥
नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षᳬशीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत॥
पद्भ्याम्भूमिर्द्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ२॥ अकल्पय-
न् ॥ १६ ॥ यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्वत ।
व्वसन्तोस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्मइध्मः शरद्धविः

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्तसमिधःकृताः ॥ देवायद्यज्ञन्तन्वानाऽअवध्नन्पुरुषम्पशुम्॥१५॥ यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्माणिप्रथमान्याः सन्। तेहनाकम्महिमानः सचन्तयत्रपूर्वेसाद्ध्याः सन्तिदेवाः ॥१६॥ इतिपुरुषसूक्तम् ॥

अब सन्ध्या स्नान में कुछ लिखाजाता है कि ऊपर जो स्नान पंच प्रकार के लिखे हैं उनमें से कोई स्नान करके प्रथम भूत शुद्धि इस प्रकार करै कि॥ सोहं ॥ १६ ॥ वार जपता हुआ मनमें ध्यान करै कि जीवात्मा दीपक समान मेरे शरीर में प्रकाशमान है और इन षटचक्र को भेदन करता हुआ ब्रह्मांड में जो सहस्रदल कमल है उसमें को चौवीस तत्व सहित जाता है॥ नाम षटचक्र के ॥ मूलाधार ॥ १ ॥ स्वाधिष्ठान ॥ २ ॥ मणिपूरक ॥ ३ ॥ अनाहत ॥ ४ ॥ विशुद्ध ॥ ५ ॥ आज्ञ ॥ ६ ॥ इनको भेद सहस्र दल में परमात्मा में लयहोगया इन चौवीसों तत्वों समेत ॥ नामतत्वों के॥ पृथ्वी ॥ १ ॥ अप ॥ २ ॥ तेज ॥३॥ वायु ॥ ४ ॥ आकाश ॥ ५ ॥ रूप ॥ ६ ॥ रस ॥ ७ ॥ गंध ॥८॥ स्पर्श ॥ ९ ॥ शब्द ॥ १० ॥ नासिका ॥ ११ ॥ कर्ण ॥१२॥ जिह्वा ॥ १३ ॥ चक्षु ॥ १४ ॥ त्वक् ॥ १५ ॥ वाक् ॥१६॥ पाणि ॥ १७ ॥ पाद ॥ १८ ॥ पायु ॥ १९ ॥ उपस्थ ॥२०॥ प्रकृति ॥ २१ ॥ मन ॥ २२ ॥ बुद्धि ॥ २३ ॥ अहंकार ॥ २४ ॥ इन सब रूप जीवात्मा है वह ब्रह्मांड सहस्र दल कमल में लयहोगया शुद्ध स्वरूप हो ऐसा जानै फिर चिन्तमन करै । कि मेरी वामकुक्षि में जो पाप रूप पुरुष है अंगुष्ठ बराबर उसका ब्रह्महत्या शिर है सुवर्णस्तेयभुजा

है मदिरापान हृदय है गुरुतल्पगमन दोष कटि है पाप संग दोनो पाद हैं उपपातक लोम हैं खड्गचर्म धरे क्रोध में भरा मुखनीचे का है ऐसा चिन्तवन करके दाहिने स्वरसे कुंभक करत हुये ॥ ओं यं यं यं बीज ॥ १६ ॥ वार मनमें जपता हुआ धुआँ मिली वायु अग्नि मेरे शरीर में उस पाप पुरुष को जलाती है यह चिन्तवन करता हुआ थोडी देर दोनों नथने बन्दकर ॥ ओं रं रं रं बीज चौंसठवार कहताहुआ वाम नासिका स्वर से वायु को वाहर करते समय जानै कि वह पाप पुरुष मेरे शरी से जलके निकलगया ! फिर ओं वं वं वं बीज को ३२ वार जपताहुआ जानै कि चन्द्रमा से अमृत गिरके मेरे शरीर को शुद्ध चतन्न करता है नवीन देह होगया फिर ३२ वार ओं लं लं लं बीज जपताहुआ जानै कि पृथ्वी आदि तत्व से शरीर मेरा पूर्ण होगया। इति "भूतशुद्धिः" इसके उपरान्त आसन पर बैठके गायत्री से अंगन्यास करन्यास करके गायत्री का आवाहन करके गायत्री की प्राणप्रतिष्ठा अपने हृदयकमल पर पांचों उंगली कमलाकारकर इन मंत्रों से करै।

आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं सं षं सं हौं हंसः ॐ क्षं सं हंसः ह्रीं ॐ ब्रह्म गायत्री मंत्रस्य प्राणा-इहप्राणाः। आं २० जीवइहास्थितः । आं २० सर्वेन्द्रियाणि । आं २० वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणाइहागत्यसुखं चिरंतिष्ठन्तु स्वाहा ।

(आं२०) से यह अर्थ है कि वीसोबीज मंत्रके २० अक्षर प्रत्यकवार कहना चाहिये।

इन मंत्रों से और मंत्रों की भी प्राणप्रतिष्ठा होती है। इसके उपरान्त गायत्री के यह शापमोचन मंत्र संध्या से पूर्व एकबार और जपके अन्त मैं एकबार पढै। मंत्र यह हैं ॥

अस्य श्रीब्रह्मशापविमोचनमंत्रस्य ब्रह्म-
ऋषिः कामदुघागायत्रीच्छन्दः भुक्तिमुक्तिप्र-
दाब्रह्मगायत्रीशक्तिर्देवता ब्रह्मशापविमोचनार्थेज-
पेविनियोगः ॥ ॐ गायत्रीब्रह्मेत्युपासितांयद्रू-
पंब्रह्मविदोविदुः तांपश्यंतिधीराः सुमनसावा-
चमग्रतः गायत्रि भगवतित्वंब्रह्मशापाद्विमुक्ता-
भव ॥ अस्य श्रीविश्वामित्रशापाविमोचनमं-
त्रस्यनूतनसृष्टिकर्ताविश्वामित्रऋषिर्वाग्दुहागाय-
त्रीच्छन्दः विश्वामित्रानुगृहीता गायत्रीशक्ति-
र्देवता विश्वामित्रशापविमोचनार्थेजपेविनियोगः।
ॐ गायत्रींभजाम्यग्निमुखीं विश्वागर्भायदुद्भवाः
देवाश्चक्रिरेविश्वसृष्टिंतांकल्याणीमिष्टकरींप्रपद्ये-
यन्मुखान्निःसृतोऽखिलवेदगर्भः गायत्रि भगव-
तित्वं विश्वामित्रशापाद्विमुक्ताभव ॥ इति ॥
अस्य श्रीवसिष्ठशापविमोचनमंत्रस्यनिग्रहानुग्र-
हकर्तावसिष्ठऋषिः विश्वोद्भवागायत्रीच्छंदोवसि-
ष्ठानुग्रहीतागायत्रीशक्तिर्देवतावासिष्ठशापविमोच-
नार्थेजपेविनियोगः ॥ ॐ सोहमर्कमहं ज्यो-
तिरर्कज्योतिरहंशुक्रः सर्वज्योतिरसोहमे।अहो-
देविमहारूपेदिव्येसन्ध्येसरस्वति । अजरे अमरे
देविब्रह्मयोनेनमोस्तुते गायत्रिदेवित्वं वसिष्ठशा-

द्विमुक्ताभव ॥ श्लोक ॥ शापयुक्तांतुयांसंध्यांमूढोऽपश्यउपासतेनिष्फलंतुभवेत्तस्य इहलोकेपरत्रच ॥ १ ॥ तस्माद्विमोक्षणंशापात्कर्तव्यंतुद्विजातिभिः ॥ शापादुद्धारिता संध्याभुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥

स्मृत्यान्तर यह वचन मेरे गुरुदेव ने मुझ से कहा है ।

मृत्तिकास्थोयथास्वर्णोनमुञ्चातिस्वरूपताम् ॥ तथा वर्षसहस्रेषु नद्विजत्वंत्यजेद्द्विजः ॥१॥ वन्हिंप्राप्ययथास्वर्णः श्यामिकांत्यजतेध्रुवम् ॥ त्रिपदीञ्चतथाप्राप्यद्विजः शुद्ध्येन्नसंशयः ॥ २ ॥

इस ग्रन्थ में जो २ बातें लिखी हैं वह संध्या और मृतकादि प्रसंग के कारण से लिखी हैं क्योंकि संध्या आदि जप में सूतक विचार अवश्य सब को करना होता है और स्त्री धर्मादि कुछ आवश्यक धर्म वर्णन हुए हैं यद्यपि संस्कृत में और धर्मशास्त्र में सब बातें लिखी हैं उन को सर्वसाधारण नहीं देख सकते हैं इसकारण भाषा में एकत्र वचनों सहित जो बातें आवश्यक हैं इस में अपने उन द्विजाती भाइयों के हित के कारण लिखा कि वह आप इसके भावार्थ से अपने प्रयोजन के अनुकूल देख के विद्वानों से सम्मति कर अपने कार्य में प्रवृत्त हों बहुत से वेद मन्त्रों के ऋषि छन्द नहीं मिले और कुछ मन्त्र भी ऊपर लिखे नहीं मिले इसकारण उनको लिखा नहीं क्योंकि विना ऋषि छंद विनियोग के वेद मन्त्र जपनेमेंदोष लिखा हैं ऋग्वेद मन्त्र में

के सूक्त मन्त्र ऋषि छन्दादि अति उत्तम प्रमाण सहित मैंने इस में लिखे हैं और स्मृति भी अङ्गमीत स्मृति पर देकर लिखी हैं जो कोई भूल वा अशुद्धता हो उसको विद्वान महाशय क्षमा करें क्योंकि मेरा अभिप्राय केवल सर्व साधारण द्विजाती भाइयों के हित में है सर्वभाई संस्कार युक्त संध्याआदि कर्म अपने वर्णानुकूल करके ईश्वर आज्ञापालें देखो भाई जो अपने पिता की आज्ञापालें हैं उनको वह प्रसन्न हो सर्व पदार्थ अपने बलके अनुकूल देते हैं जिससे पुत्र सर्वानन्द को प्राप्तहोता है ऐसेही अपना वर्ण धर्म करने से (जो ईश्वर आज्ञा है) ईश्वर तुमको सर्व सुख देकर यथा पूर्व करदेंगे ईश्वर मेरे द्विजाती भाइयों पर ऐसी कृपा चितवन करो जिसमें वह आपकी आज्ञानुसार धर्म परायण होके यथा पूर्व वांछित सुख को प्राप्त हों ।

अघमर्षणाद्द्विजराज समाप्त ।

अघमर्षणाद्विजराज का-

शुद्धाशुद्धपत्र ।

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
४	१६	पर्वव	पर्व्वत
४	२३	पम्शुराम	परशुराम
५	७	अग	अङ्ग
५	१२	जातीया	जाताय
६	१७	त	तु
८	१६	म	स
९	२१	त्यप्य	त्यप
९	२३	हा	हो
१०	२०	म	स
१०	२०	न	ने
१०	२१	एं	ऐ
१२	१३	तया	ता
१३	१०	ख	स्र
१४	१०	द्व	द्व
१४	१६	द्र	द्रे
१५	१६	क्षत्री	छतरी
१७	१७	फ	कू
१९	१२	कर्मो	कर्मों
१९	२२	म	स
२२	११	पत्र	पाद
२२	१२	यंत्र	मंत्र
२२	२५	क्षु	क

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
२५	२१	स्तेम	स्तोम
२८	२३	थो	षो
२९	२२	वांद्रिव	वांछित
३१	१०	मोता	गोता
३४	३	अतार्पेते	अतर्पिते
३४	१२	पूगी	पूरी
३४	१३	स्मृाव	स्मृति
३४	१९	चेतुर	चतुर
३५	१७	कृतं	कृते
३६	२	जिजानी	विजानी
४१	७	पुरुषसूक्त	यह क्षेपक है
४६	१०	ह	उ
४६	१४	प्रणव रहगया	ओं
४६	१७	वोढा	वोढ्हा
४७	४	क	ल
४७	६	ग	गं
४७	६	वं	वे
४७	१७	च	क्षेपक है
४७	२०	वो	वाँ
४८	१	आ	अ
४८	७	नँ	नं
४८	१६	सुम्वः	सुम्वः
४८	१७	मेन्द्र	मेन्द्रं
४८	१८	तादे	तौद

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
४७	४	क	ह
४७	१९	हे	है
४८	१६	विदे	विदं
५०	५	म	व
५०	१०	मा	मां
५१	४	अ	आ
५२	२	घ	य
५२	४	तं	ते
५२	७	काके	करके
५२	१३	त	द
५२	२	भग	भय
५३	२	का	को
५३	३	मा	सा
५३	४	त	ते
५३	६	का	को
५३	१०	वाग	वार
५३	१०	ना	ता
५३	१०	सं	से
५३	११	कं	के
५३	११	मं	मे
५३	११	चवम	चेतन
५३	१२	वं	वी
५३	१३	मंग	मेरा
५३	१३	हागम	होगया
५३	१७	कौ	करै